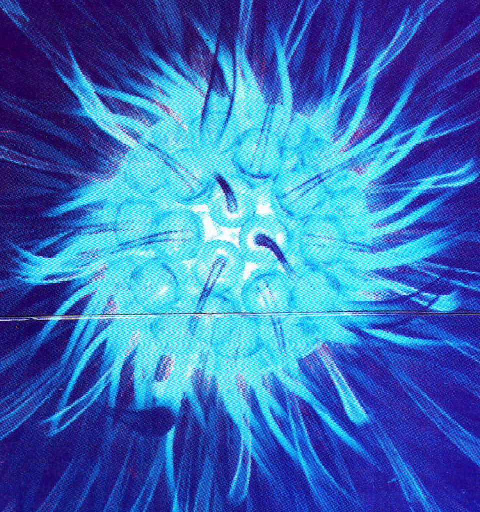
प्राकृत-बोध



- आचार्य सुनीलसागर

दिगम्बराचार्यश्री सुनीलसागर विरचित

प्राकृत-बोध

(सरल प्राकृत व्याकरण)

कृति
प्राकृत-बोध (सरल प्राकृत व्याकरण)

कृतिकार
आचार्यश्री सुनीलसागरजी महाराज

संपादक
प्रो. प्रेम सुमन जैन, श्रवणवेलगोला
डॉ. महेन्द्र कुमार जैन 'मनुज', इन्दौर

संविभागी
सकल दिगम्बर जैन समाज, आडुळ,
जिला-औरंगाबाद (महा.)

प्राप्ति स्थान
१. प्रकाशक व
२. अमर ग्रंथालय- श्री दि. जैन उदासीन आश्रम
५८४, म. गां. मार्ग, इन्दौर (म. प्र.)

सहयोगराशि
रु. २०.०० (पुन: प्रकाशनार्थ)

आवृत्ति :
प्रथम, २००० प्रतियाँ, (विद्यार्थी संस्करण)
श्रुतपंचमी, २००७, वीर नि.सं. २५३३

प्रकाशक
जैन संस्कृति शोध संस्थान
२२/२, रामगंज, जिन्सी, इन्दौर,
मो. ९८२६० ९१२४७

---

prākṛta-bōdh

by

ĀCHĀRYA SUNĪLSĀGAR

आशीर्वाद

यह भारतभूमि पुराकाल से ही साधुसंतों के अवतरण, निष्क्रमण, आचरण एवं साधना से सदा पवित्र होती रही है। वर्तमान काल में भी अनेक भव्यजीव अपनी आत्मा का उद्धार कर रहे हैं। उन्हीं में प.पू. मुनिकुंजर, समाधिसम्राट, अप्रतिम उपसर्ग विजेता, आदर्श तपस्वी, महामुनि, दक्षिण भारत के वयोवृद्ध दिगम्बर संत, आचार्यपरमेष्ठी श्री १०८ आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर) के पट्टाधीश आचार्य महावीरकीर्ति जी महाराज के शिष्य वात्सल्य रत्नाकर आचार्य विमलसागरजी महाराज हुए हैं। इन्होंने स्वात्महित के साथ परहित भी किया है तथा अपनी तपोपूत आत्मा से भव्य आत्माओं को हितोपदेश दिया है। वह उपदेश ग्रंथरूप में भी लिपिबद्ध है।

आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर ने भाद्रपद शुक्ला ४ वि.सं. १९२३ सन् १८६६ को महाराष्ट्र के अंकलीग्राम में जन्म लिया। मगशिर शुक्ला २ वि. सं. १९७० सन् १८१३ को सिद्धक्षेत्र कुंथलगिरि पर दीक्षा ली। ज्येष्ठ शुक्ला ५ वि. सं. १९७२ सन् १९१५ को जयसिंहपुर में आचार्यपद को ग्रहण किया। फाल्गुन कृष्णा १३ वि.सं. २००१ सन् १९४४ को ऊदगाँव कुंजवन में समाधिमरण किया। उन्होंने अपने दीक्षाकाल में प्रायश्चित्त विधान (प्राकृत) को भाद्रपद शुक्ला ५ वि.सं. १९७२ सन् १९१५, जिन धर्मरहस्य (संस्कृत) को मगशिर शुक्ला २ वि.सं. १९९९ सन् १९४२, दिव्यदेशना (कन्नड) को मगशिर शुक्ला ११ वि.सं. १९९९ सन् १९४२, शिवपथ (संस्कृत) को भाद्रपद शुक्ला ४ वि. सं. २००० सन् १५४३, वचनामृत (मराठी) को माघ शुक्ला १४ वि.सं. २००० सन् १९४३, उद्‌बोधन (कन्नड) को फाल्गुन शुक्ला ११ वि. सं. २००० सन् १९४३, अंतिम दिव्यदेशना (कन्नड) को फाल्गुन कृष्णा १३ वि.सं. २००१ सन् १९४४ में पूर्ण किया।

आचार्यश्री के पट्टाधीश आचार्य महावीरकीर्तिजी ने वैशाख कृष्णा ९ वि. सं. १९६७ सन् १९१० को फिरोजाबाद में जन्म लिया। फाल्गुन कृष्णा ११ वि. सं. २००० सन् १९४३ को ऊदगाँव में दीक्षा ग्रहण की। आश्विन शुक्ला १० वि.सं. २००१ सन् १९४३ को आचार्यपद गहण किया। माघकृष्णा ६ वि.सं. २०२८ सन् १९७२ को महसाना में समाधिमरण किया। आचार्यश्री ने परंपरागत ज्ञान से अपने दीक्षा-काल में प्रायश्चित्त विधान (संस्कृत) को फाल्गुन शुक्ला १३ वि. सं. २००९ सन् १९५२, वचनामृत (अंग्रेजी) वर्ड्स आफ नेक्टर (Words of nector) को मगशिर कृष्णा १० वि.सं. २००० सन् १९४३, धर्मानंद श्रावकाचार (हिंदी) को चैत्र शुक्ला १३ वि. सं. २००० सन् १९४३, प्रबोधाष्टक (संस्कृत, स्वोपज्ञ टीका सहित) को फाल्गुन शुक्ला ११ वि. सं. २००४ सन् १९४७, जिनधर्म रहस्य (हिंदी टीका) को फाल्गुन शुक्ला १३ वि. सं. २०१० सन् १९५४, चतुर्विंशतिस्तोत्र (संस्कृत) को मगशिर शुक्ला ११ वि. सं. २०१८ सन् १९६१ में पूर्ण किया।

आचार्य विमलसागर जी ने आश्विन कृष्णा ७ वि. सं. १९७२ सन् १९१५ को कोशमां ग्राम में जन्म लिया। फाल्गुन शुक्ला १३ वि. सं. २००९ सन् १९५३ को सोनागिरि में दीक्षा ग्रहण की। मगशिर कृष्णा २ वि. सं. २०१८ सन् १९६० को टूंडला में आचार्यपद प्राप्त

किया। पौष कृष्णा १२ वि. सं. २०५१ सन् १९९४ को सम्मेदशिखर में समाधिमरण किया। अपने दीक्षा काल में परंपरागत ज्ञान को, जिनवाणी का वैभव (हिंदी) को कार्तिक शुक्ला ११ वि.सं. २०१८ सन् १९५१, हे! आचार्य आदिसागर अंकलीकर (हिंदी) कार्तिक कृष्णा १० वि. सं. २०३९ सन् १९८२, संदेश (हिंदी) को आश्विन शुक्ला ९ (२३ अक्टूबर) वि. सं.२०५० सन् १९९३ को पूर्ण किया।

संदेश- हमारी आचार्य परंपरा में प्रथम मुनिकुंजर आचार्य आदिसागरजी अंकलीकर हैं। आप आचार्य महावीरकीर्ति जी के दीक्षा गुरु हैं। आचार्य आदिसागर जी अंकलीकर ने अपना आचार्यपद भी मुनि महावीरकीर्ति जी को दिया है। जैन समाज में आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) की परंपरा और आचार्य शांतिसागर जी (दक्षिण) की परंपरा इस युग में निर्बाध चली आ रही है। समाज का कर्त्तव्य है कि किसी प्रकार का विवाद न करके दोनों आचार्य परंपरा को आगम सम्मत मानकर वात्सल्य से धर्म प्रभावना करें।

इसी परंपरा में हमारे शिष्य आचार्य सुनीलसागरजी हैं। वे अनेक कृतियों के कर्त्ता-अनुवादक, त्रिभाषाकवि और श्रेष्ठ साधक हैं। उन्होंने आचार्य परंपरागत ज्ञान को प्राप्त कर 'प्राकृत-बोध' नामक ग्रन्थ की रचनाकर अपने क्षयोपशमिक ज्ञान का सदुपयोग किया है। प्राकृत भाषा में प्रवेशार्थियों को यह पुस्तक मील का पत्थर सावित होगी। इसके प्रकाशन में सहयोगी महानुभावों को आशीर्वाद।

चातुर्मास २००७, ऊदगांव (महा.)

आचार्य सन्मतिसागर

प्रकाशकीय

जैन संस्कृति शोध संस्थान के उद्देश्यों में 'जैन साहित्य एवं संस्कृति का शोध एवं प्रचार-प्रसार करना' प्रमुख है। संस्थान ने अल्प अवधि में १६ ग्रन्थ/पुस्तकें प्रकाशित कर लीं हैं। जिनमें से आचार्य श्री सुनीसागरजी महाराज द्वारा संपादित तथा डॉ. महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज' द्वारा सम्पादित तत्त्वार्थसूत्र को विहार विश्वविद्यालय द्वारा सन् २००६ से अपने स्नातकोत्तर (प्राकृत) केत्रयोदश पत्र 'जैनदर्शन एवं आचार' और पंचदश पत्र 'दर्शन साहि्त्य' के लिए स्वीकृत कर लिया है। संस्थान के द्वारा ही प्रकाशित व ब्र. सुनील भैयाजी द्वारा संकलित/संपादित पुस्तक 'जैनधर्म का प्रथम सोपान'' को कई जैन पाठशालाओं ने अपने पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर लिया है। प्राकृत व्याकरण व अनुवाद सीखने हेतु आचार्य श्री सुनीलसागरजी कृत 'प्राकृत बोध' अत्यंत उपयोगी पुस्तक है। इसे प्रकाशित कर हम गौरवान्वित हैं। जो कालेज, विश्वविद्यालय, परीक्षा बोर्ड इसे अपने पाठ्यक्रम में ले लेंगे उन्हें हम इसकीं आवश्यक प्रतियाँ नि:शुल्क उपलब्ध करायेंगे।

-डॉ. महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज',

सचिव-जैन संस्कृति शोध संस्थान,
२२/२, रामगंज, जिन्सी, इन्दौर

पूर्व-प्रकाश

आदिकाल से ही मनुष्य विकासोन्मुख रहा है। मनुओं से भाषा और प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी से लिपि प्रवाहित होकर निरंतर प्रांजल तथा बहुविध होती गई है। प्राक्+कृत=प्राकृत, पुराकाल से प्रचलित जनभाषाओं को प्राकृत कहते हैं। ऋषियों से प्रवाहित ध्वनि का अंकन द्वादशांग वेदों तथा पुराणों में हुआ है, अत: इसे आर्ष भी कहा जाता है। क्षेत्र और काल की धारा में बहकर यह अनेक रूपों में प्रतिष्ठित रही है। इस स्थिति में अन्तर्राष्ट्रीय वचन-व्यवहार तथा कालजयी साहित्य-सृजन हेतु प्राकृतों से संस्कृत का सुनियोजित व्याकरणबद्ध विकास हुआ है। कालांतर में इसे सर्वोच्च भाषा की प्रतिष्ठा मिली, इसमें राज-कार्य तथा साहित्य-सृजन होने लगा। प्राचीन संस्कृत साहित्य पर प्राकृत का प्रभाव स्पष्ट देखा जाता है।

देश व काल की भिन्नता के कारण प्राकृत अर्थात् जनभाषा अनेक रूपों में रही है। शनैः शनैः उसके कुछ रूप सुनिश्चित हो गए। यथा- शौरसेनी, अर्द्धमागधी, मागधी, पाली, महाराष्ट्री, पैशाची, अपभ्रंश आदि। वर्तमान की भाषाएं क्रमश: इन्हीं का क्रमिक विकास हैं। प्राकृत, अपभ्रंश, व्रज तथा देशी बोलियों से होती हुई आज सर्वोच्च भाषा हिन्दी के रूप में प्रतिष्ठित है।

संस्कृत की अपेक्षा प्राकृत का क्षेत्र व काल विस्तृत रहा है। तीर्थंकर जैसे दिव्य पुरुषों ने जन-जन की समझ में आने वाली जन भाषा के द्वारा ही जगत में धर्म की गंगा प्रवाहित की है। प्राचीन साहित्य की प्रकृति को समझने के लिए 'प्राकृत-बोध' अनिवार्य है। ईसा की प्रथम शती से १२ वीं शती तक का दिगम्बर जैन साहित्य तो प्राय: शौरसेनी प्राकृत में ही लिपिबद्ध है। यथा आचार्य धरसेन का जोणिपाहुड, पुष्पदन्त-भूतबली का षट्खण्डागम, गुणधर का कषायपाहुड, कुन्दकुन्द के समयसारादि, वट्टकेर का मूलाचार, शिवार्य की मूलाराधना तथा स्वामी कुमार की कार्तिकियानुप्रेक्षा आदि अनेक ग्रन्थ। इसके अलावा दिगम्बराचार्यों ने संस्कृत आदि भाषाओ की उपयोगिता देखते हुए, उनमें भी साहित्य लिखा है। विभिन्न वाचनाओं के माध्यम से ईसा की पाँचवी शती के लगभग श्वेताम्बर आचार्यों ने 'अर्द्धमागधी-प्राकृत' में अपना साहित्य व्यवस्थित रूप से संकलित कर लिपिबद्ध किया। बुद्ध वचनों को पाली में लिपिबद्ध किया गया।

प्राचीन साहित्य, दर्शन और इतिहास को समझने के लिए विभिन्न प्राकृतों का बोध आवश्यक है। प्राकृत में प्रवेशकर्ताओं को लक्ष्य कर इस 'प्राकृत-बोध' का सृजन उदयपुर चातुर्मास (२००२) में हुआ था, किन्तु इसके प्रकाशन का योग आचार्यशिरोमणि श्री आदिसागरजी (अंकलीकर) के तृतीय पट्टाधीश आचार्य गुरुदेव सन्मतिसागरजी की कृपा से अब आया है। गुरुचरणों की वंदना तथा सहयोगियों को शुभाशीष।

आडुल चातुर्मास २००७

-आचार्य सुनीलसागर

सम्पादकीय

सृजनधर्मा मनुष्य के प्रमुख आविष्कार हैं- भाषा और लिपि। इनके बिना प्रकृति पंगु ही पंगु रह जाती है। प्रकृति की गोद से उठने वाले शब्द बड़े होकर प्राकृत और अंकन लिपि कहलाए। प्राचीन शास्त्रों की भाषा में कहें तो मनुओं ने भाषा और आदिब्रह्मा ऋषभदेव तीर्थंकर ने लिपि को प्रांजल किया। भाषा विज्ञानियों की दृष्टि अलग तथ्य परोसती है और काल तथा देश के आधार से भाषा लिपियों के विकास की विस्तृत व्याख्या करती है।

सुनियोजित व्याकरणबद्ध संस्कृत आदि अनेक देशी और ग्रामीण भाषाओं की प्रसूता प्राकृत निस्संदेह अति प्राचीन भाषा है। वेदों की ऋचाओं तक में प्राकृत अंश अपना स्पष्ट प्रभाव रखते हैं। इतना जरूर है कि संस्कृत राजमान्य होकर सम्मानित होती रही, जबकि प्राकृत जनभाषा होने से ग्रामीण मानी जाती रही। पाणिनी ने भी यह स्वीकार किया है कि संस्कृत के अनेक वैकल्पिक प्रयोग 'छांदस' (प्राकृत से रूपांतरित) हैं। अनेक प्राचीन रचनाधर्मियों का साहित्य प्राकृत में उपलब्ध होता है। संस्कृत और प्राकृत को साहित्यिक भाषा होने का गौरव प्राप्त रहा ही है।

समय और क्षेत्र के परिवर्तन से सब कुछ परिवर्तित होता रहा है और आज भी होता है। भाषा और लिपियाँ भी इससे अछूती नहीं रही। 'कदम-कदम पर पानी और कोस-कोस पर बोली बदल जाती है।' अनेक बोलियों के संयोजित होने से एक नामदर्ज भाषा का रूप आता है। काल और क्षेत्र के परिवर्तन **से प्राकृ**त भाषा के भी अनेक रूप हो गए, जिन्हें भाषा-विज्ञानी, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्द्धमागधी, मागधी पाली, पैशाची, अपभ्रंश, शिलालेखी, व निया प्राकृत आदि कहते हैं।

प्राकृत का शाब्दिक अर्थ है पूर्वकृत अर्थात् पहले उत्पन्न। जो जन-सामान्य की स्वाभाविक व्यावहारिक भाषा थी वह प्राकृत कहलाई।

जन-जन को समझ में आए इस दृष्टि से ऋषि -मुनियों ने इसी को उपदेश की भाषा बनाया, जिससे इसे 'आर्ष' कहा जाने लगा। देश- काल की प्रकृतिवश ये वचन अनेक रूपों में बदलते गए, अपभ्रंषित होते गए, जिनका वर्तमान रूप प्रान्तीय बोलियों के रूप में हमारे सामने है।

बुंदेली, बघेली, मराठी, राजस्थानी, गुजराती, ब्रज, ढुंढारी आदि प्रांतज भाषाओं के अलावा वर्तमान राष्ट्र भाषा हिंदी में भी अपनी माँ (प्राकृत) की छवि झलकती है।

करुणा और जनकल्याणी दृष्टि के आयाम ऋषि-मुनि देशज (प्राकृत) भाषाओं का प्रवचन में प्रयोग करते थे। तथापि वे संस्कृत आदि के पुरोधा थे। तीर्थंकर महावीर की श्रमण परंपरा में प्राय: सभी आचार्यों ने इसी सरणी का अनुसरण किया। इसी कारण प्राकृत के अलावा उनका साहित्य संस्कृत, कन्नड, तेलगू, तमिल आदि अनेक भाषाओं में उपलब्ध होता है। वह भाषा-विज्ञान तथा आत्म-कल्याण आदि की दृष्टि से पठनीय है।

पुरा साहित्य की प्रकृति, पुराकालीन धर्म-दर्शन तथा जीवन पद्धति को समझने के लिए प्राकृत को समझना आवश्यक है। जन-मानस प्राकृत को समझे, इस दृष्टि से प्रस्तुत पुस्तिका का संयोजन हुआ है। इसकी संयोजना में संस्कृत-शास्त्री, भाषा-विज्ञानी, सिद्धहेम शब्दानुशासन व प्राकृत व्याकरण वृत्ति आदि प्राकृत व्याकरणों के गहन अध्येता, अनेक प्राकृत रचनाओं के रचयिता ज्ञानयोगी आचार्य श्री सुनील सागर जी का मानो ज्ञान ही छलक पड़ा है। भाषा शैली, विषय की क्रमबद्धता तथा प्रतिपादन शैली की अपूर्व संबद्धता के कारण प्राकृत-प्रवेशार्थियों के लिए यह 'प्राकृत- बोध' कृति अत्यंत उपयोगी बन पड़ी है।

मृदु स्वभावी, अभीक्षण ज्ञानोपयोगी, त्रिभाषा कवि, प्रखर वक्ता, चतुरानुयोग विद्, पूज्य आचार्य श्री ने विद्वज्जनों के निवेदन पर इसे 'विद्यार्थी- संस्करण' का रूप दिया है। इस हेतु हम उनके प्रति विनम्र व कृतज्ञ हैं। कृति की संयोजना में ब्रह्मचारिणी दीदी सुष्मिता 'जिनेश', डॉ. उदयचन्द्र जैन, डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज' का महत्वपूर्ण सहयोग रहा है।

प्राकृत भाषा एवं साहित्य के अध्ययन-अनुसंधान में इन दिनों बढ़ोत्तरी हुई है। पूज्य स्वास्ति श्री कर्मयोगी चारुकीर्ति भट्टारक स्वामी जी के मार्गदर्शन में संचालित श्रवणबेलगोला का राष्ट्रीय प्राकृत संस्थान प्राकृत के विभिन्न पाठ्यक्रम संचालित कर रहा है। आशा है उनमें भी यह पुस्तक उपयोगी प्रमाणित होगी।

-प्रो. प्रेम सुमन जैन
निदेशक-राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन एवं संशोधन संस्थान
धवल तीर्थम्, श्रवणबेलगोला-५७३१३५

अनुक्रम

---- o ----

॥ णमोत्थु वीदरागाणं ॥

प्राकृत-बोध

मंगलाचरण

अरिहंताण - सिद्धाणं, णाणादि गुण-संजुदं।
वोच्छे पागद बोधं च, साहूणं णमिऊण हं ॥

अर्थ- ज्ञान आदि अनंत-गुणों से संयुक्त अरिहंत- सिद्ध तथा साधुओं को नमस्कार करके मैं प्राकृत-बोध नामक सरल प्राकृत व्याकरण को कहूँगा।

अध्याय-1

वर्ण-विचार

भाषा की मूलध्वनियों तथा उनकी आकृतियों को वर्ण कहते हैं। वर्ण दो भागों में विभाजित किए जाते हैं- १. स्वर और २. व्यंजन।

स्वर वर्ण- जो बिना किसी सहायता के स्वयं सुशोभित होते हैं, वे स्वर कहलाते हैं। स्वर दो प्रकार के हैं-

१.ह्रस्व स्वर- अ, इ, उ; २.दीर्घ स्वर- आ, ई, ऊ, ए, ओ।

ऋ, लृ, ऐ, औ तथा अः ये स्वर प्राकृत-भाषा में इसी रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं। वे किस तरह बदलते हैं, यह दूसरे अध्याय में बतलाया जाएगा।

व्यंजन वर्ण- जिनके उच्चारण में स्वर वर्णों की अपेक्षा होती है, वे व्यंजन कहलाते हैं।

क-वर्ग- क, ख, ग, घ, ङ (ङ को अनुस्वार (—ं) होता है)

च-वर्ग- च, छ, ज, ढ, ञ (ञ को अनुस्वार (— ं) होता है)
ट-वर्ग- ट, ठ, ड, झ, ण
त-वर्ग- त, थ, द, ध, न (शौरसेनी में न का प्रयोग 'ण' होकर होता है)
प-वर्ग- प, फ, ब, भ, म (म्, न् को प्रायः अनुस्वार (— ं) होता है)
य, र, ल, व (लोप हुए व्यंजनों के स्थान पर य, व श्रुति)
श, ष, स, ह (शौरसेनी प्राकृत में श, ष का प्रयोग नहीं होता)

उच्चारण स्थान- क से म तक के वर्णों का उच्चारण मुख के किसी विशेष अंग के सहयोग से होता है, अतः इन्हें स्पर्श कहा जाता है। मुख के जिस अंग-विशेष से वर्ण का उच्चारण होता है, वर्ण को वही संज्ञा प्राप्त हो जाती है। जैसे कि-

(१) अ, आ, क, ख, ग, घ, ङ, ह, का उच्चारण कंठ से होता है, अतः ये कंठ्य कहलाते हैं।

(२) इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य का उच्चारण तालु से होता है, अतः ये तालव्य कहलाते हैं।

(३) ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष का उच्चारण मूर्द्धा से होता है, अतः ये मूर्धन्य कहलाते हैं।

(४) त, थ, द, ध, न, ल, स का उच्चारण दाँतों से होता है, अतः ये दन्ती कहलाते हैं।

(५) उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म का उच्चारण ओठों से होता है अतः, ये ओष्ठ्य कहलाते हैं।

(६) ए, ऐ का उच्चारण कंठ-तालु, ओ, औ का उच्चारण कण्ठोष्ठ तथा व का उच्चारण दन्तोष्ठ से होता है।

(७) अनुस्वार (— ं) का उच्चारण नासिका स्थान से होता है।

वर्णों की संज्ञा-

(१) वर्गों के प्रथम द्वितीय अक्षर और स ये अघोषवान कहलाते हैं।

(२) इनके अलावा शेष सभी वर्ण घोषवान कहलाते हैं।

(३) ङ, ञ, ण, न, म ये अनुनासिक हैं, — ं अनुस्वार, ँ अनुनासिक

(४) य, र, ल, व ये अन्तस्थ हैं। स्पर्श तथा ऊष्म वर्णों के बीच में रहने से ये अन्तस्थ कहलाते हैं।

(५) श, ष, स और ह ये ऊष्म हैं। इनके उच्चारण में उष्णता होती है।

स्मरण रखें

(१) प्राकृत में प्रारंभ और अंत में हलन्त अर्थात् बिना स्वर का वर्ण नहीं होता है।

(२) विसर्ग (:) को शौरसेनी प्राकृत में 'ओ' हो जाता है। जबकि अर्द्धमागधी प्राकृत में 'ए' भी प्रयुक्त होता है।

(३) शौरसेनी'ङ' और 'ञ' अनुस्वार के रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। जबकि अर्द्धमागधी प्राकृत में 'ञ' का प्रयोग इसी रूप में भी होता है।

(४) शौरसेनी में 'स' का प्रयोग होता है, 'श'-'ष' का नहीं। जबकि अर्द्धमागधी, प्राकृत व पाली में 'श' में 'ष' भी प्रयुक्त होता है।

(५) शौरसेनी में 'ण' का प्रयोग सर्वत्र होता है, जबकि महाराष्ट्री और अर्धमागधी का प्रारंभिक 'न' इसी रूप में रहता है।

(६) प्राकृत में मूल 'य' का अभाव है, किंतु लोप हुए वर्णों के स्थान पर 'य' आ जाता है।

(७) प्राकृत में द्र, य्य, ण्ह, म्ह, ल्ह को छोड़कर प्राय: भिन्नवर्गीय-वर्णों का संयोग नहीं होता है। इसका कथन चतुर्थ अध्याय में किया जायगा।

(८) हलन्त ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, का शब्द में प्रयोग होने पर उन्हें अनुस्वार (ं) हो जाता है।

अभ्यास

प्रश्न १. स्वर की परिभाषा लिखते हुए स्वर के भेद लिखिए?

प्रश्न २. व्यंजन किसे कहते हैं?

प्रश्न ३. प्राकृत भाषा में स्वर कितने तथा वे कौन से हैं, लिखो?

प्रश्न ४. वर्ग कुल कितने तथा कौन-कौन हैं?

प्रश्न ५. शौरसेनी प्राकृत के कोई तीन साधारण नियम बताइए?

प्रश्न ६. वर्णोच्चारण संबंधी कोई तीन बिंदु लिखिए?

प्रश्न ७. अनुनासिक तथा अन्तस्थ वर्ण कौन से हैं?

---- ० ----

अध्याय-२

स्वर-परिवर्तन

प्राकृत भाषा चूँकि प्राचीनतम जनभाषा है, किंतु कालान्तर में संस्कृत ने उसको बहुत प्रभावित किया वैयाकरणों ने संस्कृत के माध्यम से प्राकृत सीखने के लिए एक पद्धति विकसित की भी। उसके अनुसार संस्कृत के स्वर एवं व्यंजन परिवर्तन की शैली को समझना आवश्यक है।

ह्रस्व स्वरों का दीर्घीकरण-

(१) य, र, व का श, ष, स के पूर्व या पश्चात् लोप होने पर श, ष, स के पूर्व स्वर का दीर्घ हो जाता है।

जैसे- य लोप होने पर- कश्यपः = कासवो, पश्यति =पासइ, पासदि, शिष्यः=सीसो।

र लोप होने पर- विश्राम्यति = वीसमदि, हर्षः=हासो।

व लोप होने पर- अश्वः=आसो, विश्वासः=वीसासो।

श लोप होने पर- दुश्शासनः=दूसासणो।

(२) ह्रस्व स्वरों का वैकल्पिक दीर्घीकरण-

जैसे- समृद्धिः=समिद्धी, सामिद्धी; प्रकटं=पयडं, पायडं।

प्रतिपदा= पडिवआ, पाडिवआ; मनस्विन्= मणंसिण, माणंसिण।

प्रसिद्धि= पसिद्धि, पासिद्धी; सदृशः= सरिच्छो, सारिच्छो।

(३) प्रारंभिक 'अ' को 'इ'। जैसे- स्वप्नः= सिविणो, सिमिणो, कृपणः= किविणो, दत्तम्= दिण्णं, व्यजनम्=विअणं, व्यलीकम्=विलिअं, अंगारः=इंगालो, ललाटम्= णिडालं-णहालं।

(४) मध्य अ को 'इ'। जैसे- सप्तपर्णः= छत्तिवण्णो, मध्यमः=मज्झिमो, कतमः= कइमो, प्रथमः=पढिमो।

(५) अ को उ- ध्वनिः=झुणी, खण्डितः=खुडिओ, प्रथमं= पुढमं- पढमं, सर्वज्ञः= सव्वण्हू, कृतज्ञः=कयण्हू, गवया=गउआ।

(६) अ को ए- सौन्दर्यम्= सुंदेरं, शय्या=सेज्जा, बल्ली=वेल्ली, पर्यन्तः-पेरंतं, कन्दुकं= गेंदुअं, आश्चर्यम्=अच्छेरं, ब्रह्मचर्यम्=बंभचेरं।

(७) अ को ओ- नमस्कारः=णमोक्कारो, परस्परं=परोप्परं, पद्मं=पोम्मं, अर्पितम्=ओप्पियं, अर्पयति=ओप्पेइ, स्वपिति=सोवइ।

(८) अ का लोप(वैकल्पिक)- अलाबु= अलाऊ-लाऊ, अरण्यं=अरण्णं, रण्णं।

(९) आ को अ (वैकल्पिक)- यथा= जह- जहा, उत्खातं= उक्खयं-उक्खायं, चमरः= चमरो-चामरो, कालकः= कलओ-कालओ, स्थापितः= ठविओ-ठाविओ, कुमारः= कुमरो-कुमारो, ब्राह्मणः= बम्हणो-बाम्हणो,यथाख्यातः=जहखादो-जहाखादो, दावाग्निः= दवग्गी-दावग्गी, चाटुः= चडू-चाडू।

(१०) मध्य आ को अ- प्रवाहः=पवहो-पवाहो, प्रहारः=पहरो-पहारो, प्रस्तावः=पत्थवो-पत्थावो, प्रकारः=पयरो-पयारो।

(११) अनुस्वार सहित आ को अ- मांसम्=मंसं-मासं, कांसिकः= कंसिओ, कास्यं=कंसं, वांशिकः=वंसिओ, पाण्डवः=पंडवो, सांसिद्धिकः=संसिद्धिओ, प्रांसु=पंसु-पांसु।

(१२) आ को इ- सदा=सइ-सया, निशाचरः=णिसिअरो-णिसाअरो, कूर्पासः=कुप्पिसो-कुप्पासो, आचार्यः=आइरिओ-आअरियो-आयरियो।

(१३) आ का ई- स्त्यानम्=थीणं-ठीणं, खल्वाटः=खल्लीडो।

(१४) आ का उ- सास्ना=सुण्डा, स्तावकः=थुवओ।

(१५) आ को ऊ- आसारः= ऊसारो-आसारो, आर्या=अज्जू-अज्जा।

(१६) आ का ए- ग्राह्यं=गेज्झं, द्वारम्=देरं-दारं-वारं, पारापतः=पारेवओ-पारावओ, मात्रं=मेत्तं।

(१७) आ का उ और ओ- आर्द्रम्=उल्लं-ओल्लं, आली=ओली-ओरी।

(१८) दीर्घ का ह्रस्व- दीर्घ स्वर से आगे संयुक्त अक्षर आने पर दीर्घ स्वर को ह्रस्व हो जाता है। जैसे- आम्रम्=अम्बं, ताम्रम्=तम्बं, बिरहाग्नि=विरहग्गी, आर्षम्=अस्सं, गणीन्द्रः=गणिंदो, महेन्द्रः=महिंदो, मुनीन्द्रः=मुणिंदो, देवेन्द्रः= देविंदो, तीर्थम्=तित्थं, चूर्णः=चुण्णो, नीलोत्पलम्ः=णीलुप्पलं।

(१९) इ का अ- पथिकः =पहगो, पृथिवी=पुहवी-पुढवी, मूषिकः=मूसओ, हरिद्रा=हलद्दा-हलिद्दा, बिभीतिकः=बहेडओ, शिथिलं=शिढिलं।

(२०) इ को ई- जिह्वा=जीहा, सिंहः=सीहो, विंसत्=वीसा, त्रिंशत्=तीसा, निःसरति=णीसरदि, निश्वासः= णीसासो।

(२१) इ को उ- द्विमात्रः=दुमत्तो, द्विविधः=दुविहो, द्विरेफः=दुरेहो, द्विवचनं=दु-वयणं, इक्षुः=उच्छू।

(२२) इ को ए तथा इ- पिण्डम्=पेण्डं-पिण्डं, धम्मिल्लम्=धम्मेल्लं-धम्मिल्लं, विष्णुः=वेण्हू-विण्हू, पिष्टम्=पेट्ठं-पिट्ठं, बिल्वम्=बेल्लं-बिल्लं, किंशुकम्= केंसुअं-

किंसुगं, सिन्दूरम्=सेंदूरं-सिंदूरं।

(२३) इ को ओ तथा इ का लोप- द्विधा क्रियते=दोहा किज्जइ, द्विधा कृतम्=दोहा कयं, निर्झरः=ओज्झरो-णिज्झरो, इदानीम्=दाणिं।

(२४) ई को अ और आ- हरीतकी=हरडई, कश्मीराः=कम्हारा।

(२५) ई को इ- अलीकम्=अलिअं, पानीयम्=पाणिअं, जीवति=जिअइ, करीषः=करिसो, द्वितीय्=दुइयं, शिरीषः=सिरिषो, तृतीयम्=तइयं, गंभीरम्=गहिरं, उपनीतम्=उवणियं, आनीतम्=आणियं, तदानीम्=तयाणिं, बल्मीकः=वम्मिओ, गृहीतम्=गहियं, प्रसीदम्=पसिअं।

(२६) ई को उ तथा ऊ- जीर्णः=जुण्णो-जिण्णो; हीनः=हूणो-हीणो, तीर्थं=तूहं-तित्थं, इक्षुः=उच्छू-ऊखो।

(२७) ई को ए - पीयूषं=पेऊसं-पीऊसं, आपीडः=आमेलो, विभीतकः=बहेडओ, कीदृशः=केरिसो, ईदृशः=एरिसो, नीडं=नेडं-नीडं, पीठम्=पेढं-पीढं।

(२८) उ को अ- मुकुटम्=मउडं, मुकुलः=मउलो, अगुरुम्-अगरुं, मुकुरं=मउरं, युधिष्ठिरः=जहुट्ठिलो-जुहुट्ठिरो, गुडूची=गलोई, उपरिं=अपरिं-उवरिं, गुरुकः=गरुओ-गुरुओ।

(२९) उ को इ- पुरुषः=पुरिसो, पौरुषम्=पउरिसं, भ्रुकुटिः=भिउडी।

(३०) उ को ऊ- सुभगः=सूहवो-सुहवो-सुभगो, मुसलम्=मूसलं-मुसलं, उच्छवसति=ऊससइ, दुस्सह=दूसहो-दुसहो, दुर्भगः=दूहवो-दुब्भगो, दुर्गमः=दूगमो-दुग्गमो।

(३१) उ को ओ- तुण्डम्=तोण्डं, मुण्डम्=मोण्डं, पुष्करम्=पोक्खरं, कुट्टिमम्=कोट्टिमं, पुस्तकम्=पोत्थअं, लुब्धकः=लोद्धवो, मुद्गरः=मोग्गरो, पुद्गलं=पोग्गलं-पुग्गलं, कुन्तः=कोंतो, व्युत्क्रांतः=वोक्कंतो, कुतुहलम्=कोऊहलं-कोउहल्लं-कोउहलं।

(३२) ऊ को अ - सूक्ष्मम्=सण्हं-सुण्हं-सुहुमं (आर्षे), दुकूलम्=दुअल्लं-दुऊलं।

(३३) ऊ को इ, ई तथा ए- नूपुरम्=निउरं-नेउरं-नुउरं, उद्व्यूढम्=उव्वीढं-उव्वूढं, ऊसः=उच्छो।

(३४) ऊ को उ- मधूकम्=महुअं-महूअं।

(३५) ऊ को ओ- कूष्माण्डी=कोहंडी-कोहली, तूणीरम्=तोणीरं, कर्पूरं=कोप्परं-कप्पूरं, स्थूलं=थोरं-थूलं, ताम्बूलम्=तंबोलं, गुडूची=गलोई, मूल्यम्=मोल्लं, स्थूणा=थोणा-थूणा, तूणम्=तोणं-तूणं।

(३६) ऋ को अ- घृतम्=घयं, तृणम्=तणं, कृतम्=कयं-कदं, मृगः=मओ, धृष्टः=धट्टो, मृदुकम्=मउअं, वृषभ=वसहो।

(३७) ऋ को आ- कृशा=कासा, मृदुकं=माउक्कं, मृदुत्वम्=मउत्तणं।

(३८) ऋ को इ- कृपा=किवा, कृषि=किसी, कृशः=किसो, हृदयं=हिययं, दृष्टम्=दिट्ठं, मृष्टम्=मिट्ठं, दृष्टिः=दिट्ठी, सृष्टम्=सिट्ठं, सृष्टिः=सिट्ठी, गृष्टिः=गिट्ठी, पृथ्वी=पिच्छी, भृगु=भिऊ, वृत्तम्=वित्तं, ऋषिः=इसी, कृपणः=किविणो, धृतिः=धिई-धिदी, कृतिः=किई-किदी, कृच्छ्ं=किच्छं, तृप्तं=तित्तं, गृद्धि=गिद्धी, कृशानुः=किसाणू, श्रृंगारः=सिंगारो, श्रृंगालः=सियालो, भृंगारः=भिंगारो, पृष्ठिः=पिट्ठी, मृत्यु=मिच्चु-मच्चू, धृष्ठः=धिट्ठो, श्रृंगं=सिंगं।

(३९) ऋ को उ- ऋजुः=उजू, ऋतुः=उऊ-उडू, स्पृष्टः=पुट्ठो, प्रवृष्टः=पउट्ठो, पृथिवी=पुढवी, परामृष्टः=परामुट्ठो,प्रवृत्तिः=पउत्ती, प्रावृषः=पाउसो, प्राभृतः=पाहुडो,भृतिः=भुई-भुदी, प्रभृतिः=पहुडी, पितृपतिः=पिडवई, पितृवनम्=पिडवणं, पितृश्वसा=पिडसिआ, मातृश्वसा=माउसिआ, वृन्दारकाः=वुंदारआ-वुंदारया, निवृत्तम्=निवुत्तं, वृत्तान्तः=वुत्तंतो, संवृत्तम्=संवुअं-संवुडं, ऋषभः=उसहो, मातृकः=माउओ, परभृतः=परहुओ।

(४०) ऋ को रि- ऋद्धिः=रिद्धी, ऋच्छः=रिच्छो, ऋषभः=रिसहो, ऋतुः=रिऊ, ऋषिः=रिसी, ऋणं=रिणं, सदृशः=सरिच्छो।

(४१) लृ को इलि- क्लृप्तः=किलित्तो, क्लृन्नः=किलिन्नो।

(४२) ए को इ- वेदना=वियणा-वेयणा, चपेटा=चविडा-चवेडा, देवरः=दिअरो-देअरो, केशरः=किसरो-केसरो।

(४३) ऐ को इ- सैन्धवम्=सिंधवं, शनैश्चरः=सणिच्छरो, सैन्यम्=सिन्नं-सेन्नं, शैलं=सिलं-सेलं, कैतवः=कितवो-केतवो।

(४४) ऐ को ए- शैलाः=सेला, ऐरावणः=एरावणो, कैलाशः=केलासो, वैद्यः=वेज्जो, कैटभः=केटहो, वैधव्यम्=वेहव्वं।

(४५) ऐ को अइ- दैन्यम्=दइन्नं, दैत्यः=दइच्चो, सैन्यम्=सइण्णं, ऐश्वर्यम्=अइसरियं, भैरवः=भइरवो, वैजवनः=वइजवणो, दैत्यम्=दइतं, वैरं=वइरं-वेरं, वैशाली=वइसाली, वैशाखः=वइसाहो, वैश्वानरः=वइस्साणरो, स्वैरं=सइरं, वैदर्भः=वइदब्भो, कैलाशः=कइलासो-केलासो, चैत्यम्=चइत्तं-चेत्तं, वैश्रवणः=वइसवणो-वेसवणो, वैशम्पायनः=वइसंपायणो-वेसंपायणो, वैतालिकः=वइतालिओ-वेतालिओ,चैत्रः=चइत्तो-चेत्तो, वैशेषिकः=वइसेसिओ-

वैसेसिगो, दैवम्=दइवं-दइव्वं-देव्वं।

(४६) ओ को उ- प्रकोष्ट:=पउट्ठो-पवट्ठो, आतोद्यं=आउज्जं-आवज्जं, अन्योन्यम्=अण्णुण्णं-अण्णोणं, गो=गउओ-गउआ-गाओ।

(४७) औ को ओ- कौमुदी-कोमुई-कोमुदी, यौवनम्=जोव्वणं।

(४८) औ को उ- सौन्दर्यम्-सुंदेरं, कौक्षेयम्=कुच्छेअयं-कोच्छेअयं।

(४९) औ को अउ- गौरव:=गउरवो-गोरव, कौरव:=कउरवो-कोरवो, पौर:=पउर:, चौर:=चउरो।

(५०) स्वर सहित व्यंजन को ओ- बदरम्=बोरं, पूतर:=पोरो, नवमालिका=णोमालिका-णवमालिआ, नवफलिका=णोहलिया, पूगफलम्=पोप्फलं, मयूख:=मोहो-मऊहो, लवणम्=लोणं-लवणं, चतुर्गुण:=चोग्गुणा-चउग्गुणो, चतुर्थी=चोत्थी-चउत्थी, चतुर्दशी=चोद्दसी-चउद्दसी, चतुर्वार:=चोवारो-चउव्वारो, सुकुमार:=सोमालो-सुउमालो-सुकुमारो, कौतुहलम्=कोहलं-कोउहलं, उद्खल:=ओहली, अवतरति=ओअरइ-अवयरइ, अवकाश:=ओयासो-ओगासो-अवयासो, अपसरति=ओसरइ-अवसरइ, अपसरितम्=ओसरिअं-अवसरियं, उपहरितं=ओहरियं-उवहरियं-उवहरिअं, उपहसितम्=ओहसियं-उपहसियं, उपाध्याय:=ओज्झाओ-उवज्झाओ, उपवास:=ओआसो-उववासो।

अभ्यास

प्रश्न १. सुकृतं, प्राकृतं, नाथपुत्र, प्रांसु शब्दों का प्राकृत रूपान्तरण कीजिए?

प्रश्न २. प्राकृत भाषा के लोक प्रचलित पाँच शब्द लिखिए?

प्रश्न ३. ऋ परिवर्तन के नियम को स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न ४. कैलाशपति:, ऋषभदेव:, उपाध्याय:, अरिहंत:, आचार्य: इन शब्दों की विकल्प सहित प्राकृत कीजिए?

प्रश्न ५. विभिन्न प्राकृतों में अरहंत शब्द को स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न ६. औ परिवर्तन के नियम स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न ७. संस्कृत दीर्घ से प्राकृत में ह्रस्व हो जाने वाले कोई पाँच शब्द लिखिए?

---- ० ----

अध्याय-३

सरल व्यंजन परिवर्तन

एक मात्रिक अथवा असंयुक्त व्यंजन को सरल व्यंजन कहते हैं। प्राकृत भाषा में संस्कृत के व्यंजन परिवर्तन की शैली इस प्रकार है।

(१) क का ख- कीलः = खीलो, कुब्जः = खुज्जो, कर्पूरं = खप्परं।

(२) क का ग- मरकतम् = मरगयं, मदकलः = मयगलो, कन्दुकं = गेन्दुअं, एकः = एगो।

(३) क का च- किरातः = चिलाओ।

(४) क का भ या ह (वर्ण विपर्यय सहित)- शीकरः = सीरभो - सीरहो।

(५) क का ह- स्फटिकः= फलिहो, चिकुर := चिहुरो, निकषः = णिहुसो।

(६) ख, घ, थ, ध, भ का ह-

ख-शाखा - साहा, मुखं = मुहं, लिख = लिह, दुःख = दुह, प्रमुखः=पमुहो।

घ- मेघः = मेहो, माघः = माहो, जघन्यं = जहण्णं।

ध-नाथः=णाहो, कथा=कहा, मैथुनं=मेहुणं।

ध- साधुः=साहू, साधनम्=साहणं।

भ-ऋषभः=रिसहो, नभं=णहं, विभवः=विहवो।

(७) थ का ध या ह- पृथक् = पुधं - पुहं, अथ = अध - अह।

(८) ख का क- शृंखलम् = संकलं।

(९) ट का ड - घटः = घडो, पटः = पडो, नटः =नडो, भटः =भडो, फाटयति = फाडेइ, चपेटा = चविडा।

(१०) ट का ढ - शटकः = सढओ, कैटभः = केढओ।

(११) ट का ल - स्फटिकः = फलिहो, पाट = पाल, चपेटा = चविला।

(१२) ठ का ढ - कमठः = कमढो, कुठारः = कुढारो, पठति = पढइ, मठ = मढ, सठ=सढ।

(१३) ड का ल - वडवामुहम् = वलयामुहं, गरुडः = गरुलो, लडागम् = ललायं, क्रीड = कील, वैडूर्यमणि = वेलूरियमणि।

(१४) त का ट - तगरः = टगरो, त्रसरः = टसरो, तूवरः = टूवरो।

(१५) त का ड- प्रतिपन्नं = पडिवण्णं, प्रतिहासः = पडिहासो, प्रतिहारः = पडिहारो-पडिहेरो, प्रतिसारः = पडिसारो, प्रतिस्पर्धी =

पडिप्फदी, प्रतिमा = पडिमा, प्रतिपदा = पडिवया, वेतसः = वेडिसो, प्रतिनिवृत्तम् = पडिणियत्तं।

(१६) त का ण - गर्भितः = गब्भिणो, अतिमुक्तकम् = अणिउत्तयं, रुदितम् = रुण्णं, दत्तम् = दिण्णं।

(१७) त का ट - पत्तनम्=पट्टणं, घत्तनं=घट्टणं।

(१८) त का ल - अतसी = अलसी, सातवाहनः = सालवाहणो, पलितं = पलिलं - पलिअं।

(१९) त का ह - वसतिः = वसही - वसदी, भरतः = भरहो, वितस्तिः = विहत्थी, काहरः=काहलो, मातुलिङ्गम्=माहुलिंगम्।

(२०) थ का ढ- शिथिरः=सिढिलो, मेथिः=मेढी, शिथिलः=सिढिलो, प्रथमः=पढमो, निशीथः=णिसीढो, पृथिवी=पुढवी।

(२१) द का ड- दशनम्=डसणं, दष्टः=डंट्ठा, दग्धः=दड्ढो, दोला=डोला, दण्डः=डण्डो, दरः=डरो, दाहः=डाहो, दम्भः=डंभो, कदनम्=कडणं, दोहलः=डोहलो। दंश=डंस, दह्-डह्।

(२२) द का र- एकादश=एगारह, द्वादश=बारह, त्रयोदश=तेरह, गद्गदं=गग्गरं, कदली=करली।

(२३) द का ल- प्रदीपयति=पलीवयदि, प्रदीयति=पलीवेइ, प्रदीप्तं=पलित्तं, दोहदः=दोहलो, कदम्बः=कलंबो।

(२४) ध का ढ- निषधः = णिसढो, औषधम् = ओसढं - ओसहं - ओसधं।

(२५) न का ण- ज्ञानम् = णाणं, नयनम् = णयणं, नरो = णरो।

शौरसेनी प्राकृत में प्रायः 'ण' ही होती है; जबकि अन्य प्राकृतों में प्रारंभिक 'न' अपने रूप में बना रहता है।

(२६) प का व- शपथः = सवहो, प्रदीपः = पदीवो, पापं = पावं, उपमा = उवमा, तपः = तवो, रूपं = रूवं, स्वरूपं = सरूवं।

(२७) प का फ- पाट = फाल, परुषः = फरुसो, परिखा = फलिहा, पनसः = फणसो, परिधः = फलिहो, पारिभद्रः = फालिहद्दो।

(२८) फ का भ या ह- रेफः = रेभो - रेहो, शिफा = सिभा, मुक्ताफलं = मुत्ताहलं, सफलम् = सभलं - सहलं, शेफालिका = सेहालिया, गुफा = गुभा -गुहा।

(२९) य का ज- यजमान् = जजमाण, संयम = संजम।

(३०) श, ष का स- शब्दः = सद्दो, यशः = जसो।

शौरसेनी प्राकृत में प्रायः 'स' ही होता है; जबकि अन्य प्राकृतों में श और ष भी पाये जाते हैं।

(३१) ह का घ- सिंहः-सिंघो-सीहो, संहारः=संघारो-संहारो

(३२) श, ष, स का छ- शमी = छमी, षट्पद् = छप्पयो, षष्टः = छट्ठो, सुधा = छुहा, शावः = छावो, सप्तपर्णः = छत्तिवण्णो, शिरा = छिरा - सिरा।

व्यंजन लोप

क, ग, च, ज, त, द, प, य तथा ब इन व्यंजनों का प्रायः मध्य और अंत में होने पर लोप हो जाता है। लोप होने पर 'अ' बचता है। कहीं-कहीं श्रुति के लिए ऐसे 'अ' के स्थान पर 'य' अथवा 'व' आ जाते हैं। शौरसेनी में यह प्रायः आते हैं। लोप के बाद बचे हुए स्वर को उद्वृत्त स्वर कहते हैं, इसकी संधि नहीं होती।

क लोप- तीर्थंकरः = तित्थअरो - तित्थयरो, लोकः = लोओ - लोगो, एकः = एओ, रमणीकः = रमणीओ - रमणीयो।

ग लोप- नगः = णओ, नगरं = णअरं - णयरं, कंगनम् = कंअणं, गगनं = गयणं - गअणं।

च लोप- कवचम् = कवयं, वचनम् = वयणं, शची = सई।

ज लोप- रजकम् = रअअं, राजा = राआ - राया, गजः = गओ।

त लोप- गतः = गओ - गदो, ऋतुः = रिऊ, सुगतिः = सुगई।

द लोप- मदनः = मअणो - मयणो, वदनम् = वयणं, आदिः = आई।

प लोप- सुपुरुषः = सुउरिसो, रिपुः = रिऊ, अपघातं=अवघादं।

य लोप- नियोगः = णिओओ, वियोगः = विओओ, विनयम् = विणअं।

व लोप- लावण्यं = लाअण्णं, विवुधः = विउहो।

स्वर सहित व्यंजन लोप

क-ग का लोप- व्याकरणम् = वारणं - वायरणं, प्राकारः = पारो - पायारो, आगतः = आओ - आगओ।

ज का लोप- भाजनम् = भायणं - भाणं, दनुजवधः = दणुवहो - दणुयवहो, राजकुलं = राउलं- रायउलं, राजपुत्रः=रायपुत्तो।

द का लोप- दुर्गा देवी = दुग्गा वी - दुग्गा देई, उदुम्बरः = उंबरो - उदंबरो, पादपतनम् = पावयणं, पादपीठम् = पावीढं - पायवीढं।

य लोप- किसलयं = किसलं, कालायसं = कालासं, हृदयं = हिअं -हिअयं।

व लोप- यावत् =जा- जाव, तावत् = ता - ताव, जीवितम् = जीअं - जीविअं - जीविदं, आवर्त्तमान: = आत्तमाणो - आवत्तमाणो - आवट्टमाणो, आवृतो = आडो - आवडो। प्रवारक: = पारओ - पवारओ, देवकुलं = देउलं - देवउलं, एवमेवम् = एमेवं - एवमेवं।

अन्त्य व्यंजन लोप

प्राय: हलन्त (अधूरे) अंतिम व्यंजन का लोप हो जाता है, मध्य व्यंजन का लोप नहीं होता है; जबकि प्रारंभिक हलंत पूर्ण अथवा परिवर्तित हो जाता है। राजन् = राय, आत्मन् = अप्प, यावत् = जाव, तावत् = ताव, यशस् = जसो, युगवत्=जुगवं।

अभ्यास

प्रश्न १. सरल व्यंजन किसे कहते हैं ?

प्रश्न २. लोप होने वाले व्यंजन कौन से हैं ?

प्रश्न ३. लुप्त व्यंजन के स्थान पर क्या शेष रहता है ?

प्रश्न ४. न, प, य, त तथा ग किस रूप में परिवर्तित होते हैं, उदाहरण सहित लिखिए ?

प्रश्न ५. किरात, घट, प्रतिक्रमण, ज्ञान, शब्द और व्याकरणम् शब्दों के प्राकृत रूप लिखकर परिवर्तित व्यंजनों का उल्लेख कीजिये ?

प्रश्न ६. आदि, मध्य व अंत लोप वाले एक-एक उदाहरण लिखिए ?

प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर दीजिए ?

(क) असंयुक्त व्यंजन को सरल व्यंजन कहते हैं ? ( )

(ख) प्राकृत में प्रारंभिक 'भ' का लोप होता है ? ( )

(ग) स्वर सहित व्यंजनों का भी लोप होता है ? ( )

(घ) मध्य 'ध' का लोप पहीं परिवर्तन होता है ? ( )

(ङ) प, ब का प्राकृत में प्राय: लोप होता है ? ( )

---- o ----

अध्याय-४

कठिन व्यंजन परिवर्तन

प्रस्तुत पाठ में संयुक्त अर्थात् मिले हुए दो वर्ण संस्कृत से प्राकृत में किस प्रकार परिवर्तित किए जाते हैं, यह समझाया जा रहा है। तीन वर्णों से युक्त संयुक्त व्यंजन में से सबसे पहले कमजोर वर्ण को समाप्त करने के बाद प्राकृत व्यंजन बनता है। दो वर्णों वाले संयुक्त व्यंजनों में भी ऐसा करके शेष रहे वर्ण को द्वित्व कर देते हैं। द्वित्व होने पर पिछले दीर्घ स्वर का ह्रस्व हो जाता है। संयुक्त व्यंजनों को यहाँ कठिन व्यंजन कहा है।

(१) क्क- शक्तः = सक्को, मुक्तः = मुक्को, रुग्णः = लुक्को, दष्टः = डक्को, मृदुत्वं = माउक्कं।

(२) प्रारंभिक क्ष को ख तथा मध्य या अंत क्ष को क्ख- क्षमा = खमा - छमा, क्षायिकः = खायिगो, क्षयः = खयो, क्षीणम् = खीणं - झीणं। भिक्षा = भिक्खा, शिक्षा = सिक्खा, अक्षयः = अक्खओ, दीक्षा = दिक्खा, लक्षणं = लक्खणं, वृक्षः = रुक्खो, यक्षः=जक्खो, रक्षा=रक्खा।

(३) ष्क का क्ख- पुष्करं = पोक्खरं, स्कंधो = खंधो, निष्कम्= निक्खं-णिक्खं, शुष्कम् = सुक्खं। स्कंदः = खंदो।

(४) प्रारंभिक क्ष, स्फ, स्त का ख- क्ष्वेटकः = खेडगो - खोडओ, स्फोटकः = खोडओ, स्तंभः = खंभो - थंभो -ठंभो।

(५) क्त का त्त या ग्ग- रक्तः = रत्तो - रग्गो, विरक्तः = विरत्तो - विरग्गो, असक्तः = असत्तो।

(६) त्य का च्च- सत्यं = सच्चं, नित्यं=णिच्चं, प्रत्ययम् = पच्चययं, नृत्यम् = णच्चं, भृत्यम् = भिच्चं, प्रत्यूषः = पच्चूसो - पच्चूहो।

(७) त्व का च्च, थ्व का च्छ, द्व का ज्झ- भूत्वा = भोच्चा, ज्ञात्वा = णच्चा, श्रुत्वा = सोच्चा; पृथ्वी = पिच्छी; विद्वान् = विज्जो; बुद्ध्वा = बुज्झा, अध्यात्म= अज्झप्प।

(८) क्ष का च्छ- अक्षिम् = अच्छिं, इक्षुः = उच्छू, लक्ष्मी = लच्छी, कक्षः = कच्छो,

कुक्षि: = कुच्छी, मक्षिका = मच्छिया - मक्खिया, वृक्ष: = वच्छो, कक्षा = कच्छा, ऋक्ष: = रिच्छो।

(८) थ्य, श्च, त्स का च्छ- पथ्यम् = पच्छं, मिथ्या = मिच्छा; पश्चिमम् = पच्छिमं, पश्चात् = पच्छा; उत्साह: = उच्छाहो, संवत्सर: = संवच्छरो, चिकित्सति = चिइच्छइ, मत्सर: = मच्छरो; जुगुप्सा = जुगुच्छा, अप्सरा = अच्छरा।

(९) द्य, य्य, र्य का ज्ज- विद्या = विज्जा, मद्यम् = मज्जं, अद्य = अज्ज, वैद्य: = वेज्जो; शय्या = सेज्जा; कार्यम् = कज्जं, सूर्य: = सुज्जो, वर्ज्यम् = वज्जं, पर्यायम् = पज्जायं - पज्जयं, आर्य: = अज्जो।

(१०) ध्य, ह्य का ज्झ- उपाध्याय: = उवज्झाओ, ध्यानं = झाणं, अध्यात्मसार:=अज्झप्पसारो, स्वाध्याय: = सज्झाओ; मह्यम् = मज्झं, गुह्यम् = गुज्झं, सह्यम् = सज्झं।

(११) त्त का ट्ट- वृत्त: = वट्टो, प्रवृत्त: = पवट्टो, चक्रवर्ती = चक्कवट्टी, पत्तनम् = पट्टणं, मृत्तिका = मट्टिआ।

(१२) र्त का ट्ट तथा त्त- केवर्त: = केवट्टो, वर्तुलम् = वट्टलं, नर्तम् = णट्टं; मूर्त: = मुत्तो, मूर्ति: = मुत्ती, मुहूर्त: = मुहुत्तो, कीर्ति = कित्ति, कर्तरी = कत्तरी, भर्तृहरी = भत्तहरी, धूर्त: = धुत्तो, कार्तिक: = कत्तिओ।

(१३) स्थ, स्ट का ट्ठ- अस्थि: = अट्ठी, उपस्थिति: = उवट्ठिई; कष्टम् = कट्ठं, दुष्टम् = दुट्ठं, इष्टं = इट्ठं, दृष्टि: = दिट्ठी, सृष्टि: = सिट्ठी, लष्टि: = लट्ठी, मुष्टि: = मुट्ठी, पुष्टि: = पुट्ठी, सृष्टि: = सिट्ठी।

(१४) र्द का ड्ड- संमर्द: = संमड्डो, वितर्दि: = वियड्डी, विच्छर्द: = विच्छड्डओ, छर्दि: = छड्डी, कपर्द: = कवड्डो, मर्दित: = मड्डिओ। गर्दभ: = गड्डहो।

(१५) न्द का ण्ड- कंदरिका= कण्डलिआ, स्कन्द:=खण्डो, भिन्दिपाल:= भिण्डीवालो।

(१६) ग्ध, द्ध का ड्ढ- दग्ध: = दड्ढो, विदग्ध: = विदड्ढो, वृद्धि: = वुड्ढी, वृद्ध:=वुड्ढो, श्रद्धा =सड्ढा- सद्धा, ऋद्धि:=इड्ढी, अद्धम् = अड्ढं, वर्द्धमानम् = वड्ढमाणं।

(१७) 'म्न', 'ज्ञ' को शब्द के प्रारंभ में होने पर 'ण', मध्य-अंत में होने पर 'ण्ण'-

निम्नं = णिण्णं, प्रद्युम्नः = पज्जुण्णो, ज्ञानम् = णाणं, ज्ञाता = णाया, संज्ञानम् = सण्णाणं, निर्णयं = णिण्णयं।

(१८) 'स्त' का ' त्थ'- स्तुतिः = थुई - थुदी-त्थुदी, हस्तिः = हत्थी, अस्ति = अत्थि, प्रस्तरः = पत्थरो।

(१९) 'ष्प', 'स्प' का 'प्फ'- पुष्पम् = पुप्फं, शष्पम् = सप्फं वृहस्पतिः = वुहप्फई, निष्प्रेसः = निप्फेसो, स्पंदनम् = फंदणं, स्पर्श = फास, निस्पृह=णिप्फुह।

(२०) 'र्य' का 'र'- ब्रह्मचर्यम् = बम्हचेरं, तूर्यम् = तूरं, सौन्दर्यम् = सुंदेरं, सौण्डीर्यम् = सोण्डीरं, धैर्यम् = धीरं, पर्यन्तम् = पेरन्तं, आश्चर्यम् = अच्छेरं।

(२१) क्ष्म, श्म, ष्म, ह्म, का म्ह- पक्ष्मन् = पम्हाइं; कुश्मानः = कुम्हाणो, कश्मीराः = कम्हारा, ग्रीष्मः = गिम्हो, ऊष्मा = उम्हा; विस्मयः = विम्हओ; ब्रह्मा = बम्हा-बंभा, सुह्माः = सुम्हा, ब्राह्मणः = बम्हणो।

(२२) क्ष्म, श्म, ष्ण, स्न, ह्न, ह्ण, क्ष्ण का ण्ह- सूक्ष्मम् = सण्हं; प्रश्नः = पण्हो; विष्णु; = विण्हू, जिष्णुः = जिण्हू, कृष्णः = कण्हो; ज्योत्सना = जोण्हा, प्रस्तुतः = पण्हुओ; वन्हि=वण्ही; पूर्वाह्न = पुव्वण्हो, अपराह्न = अवरण्हो; तीक्ष्णम् = तिण्हं, श्लक्ष्णम् = सण्हं।

व्यंजन-आगम- समासांत पदों में कहीं-कहीं विकल्प से व्यंजन का आगम हो जाता है - नदी-ग्राम = नई-गामो-णइग्गामो, कुसुम-प्रकारः = कुसुम-पयरो > कुसुमप्पयरो, देवस्तुतिः = देव-थुई > देवत्थुई, बद्धफलम् = बद्ध-फलं > बद्धप्फलं, तैलम् = तेलं > तेल्लं, विचकिलम् = वेइलं > वेइल्लं, ऋजुः = उजू > उज्जू, प्रेमम् = पेमं > पेम्मं, यौवनम् = जोवणं > जोव्वणं, सेवा = सेवा > सेव्वा, नीडम् = नीडं > नेड्डं, नखाः = णहा > णक्खा, निहितः = णिहिओ > णिहित्तो, स्थाणुः = खाणू >खण्णू, स्त्यानम् = थीणं > थिण्णं।

स्वर-आगम -संस्कृत शब्दों में कहीं-कहीं स्वर का आगम करके प्राकृत में प्रयोग होता है - क्ष्मा=छिमा-छमा, श्लाघा=सलाहा, रत्नं= रयणं, स्नेहः=सणेहो, अग्निः=अगणी-अग्गी, प्लक्षः=पलक्खो, अर्हति=अरिहइ, श्रीः=सिरी, ह्रीः=हिरी, कृत्स्नः=कसिणो, क्रियाः=किरिया, दृष्ट्या=दिट्ठिया, आदर्शः=आयरिसो, दर्शनं=दरिसणं-दंसणं, वर्षम्=बरिसं-वस्सं, हर्षम्=हरिसं, तप्तः=तपिओ, क्लिन्नं=किलिन्नं, क्लिष्टम्=किलिट्ठं, शुक्लम्=सुइलं-सुक्कं,

स्यात्=सिआ, भव्यः=भविओ, चैत्यम्=चेइअं, चौर्यम्=चोरिअं-चोज्जं, भार्या=भारिआ, वीर्यम्-वीरिअं, सूर्यः=सूरिओ, धैर्यम्=धीरिअं, शौर्यम्=सोरिअं, स्वप्नः=सिविणो-सिमिणो, स्निग्धम्=सिणिध्दं-सणिद्धं, कृष्ण=किसणो-कसिणो-कसणो-कण्हो, अर्हन्=अरिहो-अरुहो-अरहो, पद्मम्=पउमं-पोम्मं, छद्मम्=छउमं-छोम्मं, मूर्खः=मुक्खो, द्वारम्=दुवारं-दारं-वारं, तन्वी=तणुवी, लघ्वी=लहुवी, गुर्वी=गुरुवी-गरुवी, पृथ्वी=पुहवी-पहुवी, बह्वी=बहुवी, मृद्वी=मउवी, स्व-जनाः=सुवेजणा, श्वःकृतम्=सुवे कयं, ज्या=जीआ।

वर्ण-विपर्यय :-

संस्कृत से शब्दों में अक्षरों का स्थान परिवर्तन कर प्राकृत में प्रयोग देखा जाता है, इसे वर्ण-विपर्यय कहते हैं। यथा- करेणू=कणेरु, वाराणसी-वाणारसी, आलातः=आणालो, अचलपुरं=अलचपुरं, महाराष्ट्रः=मरहट्ठो, ह्रदः=दहो, हरितातः=हलिआरो, लघुकं= हलुअं-लहुअं, ललाटम्=णडालं-णिडालं।

अभ्यास

प्रश्न १. कठिन व्यंजन किसे कहते हैं ?

प्रश्न २. ज्ञान, सर्वज्ञ, पृथ्वी, संवत्सर, मर्दित, श्रद्धा, ब्रह्मचर्य, उपाध्याय शब्दों का प्राकृत में रूपान्तरण कीजिए ?

प्रश्न ३. व्यंजन-आगम वाले कोई तीन शब्द लिखिए ?

प्रश्न ४. स्वर आगम वाले कोई पांच शब्द लिखिए ?

प्रश्न ५. वर्ण-विपर्यय किसे कहते हैं ? कोई दो प्रयाग लिखिए ?

प्रश्न ६. संयुक्त व्यंजन प्राकृत भाषा में किस विधि से प्रयोग में लाए जाते हैं ?

प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर दीजिए ?

(क) संयुक्त व्यंजनों को कठिन व्यंजन कहते हैं ? ( )

(ख) प्राकृत में कहीं भी व्यंजनों का आगम नहीं होता है ? ( )

(ग) प्राकृत में कहीं-कहीं स्वर का आगम होता है ? ( )

---- o ----

अध्याय-५

संधि-प्रकरण

संधि- दो वर्णों के अंतर रहित परस्पर में कमल जाने को उसे संधि कहते हैं। संधि के मुख्यतः तीन भेद हैं- १.स्वर संधि, २.व्यंजन संधि तथा ३.अव्यय संधि। प्राकृत में विसर्ग नहीं होता, अतः विसर्ग संधि भी नहीं होती।

(१) स्वर संधि के भेद- . दीर्घ संधि, २. गुण संधि, ३. ह्रस्व-दीर्घ संधि, ४. संधि निषेध, तथा ५. स्वर लोप संधि।

१. दीर्घ संधि- समान स्वर होने पर दीर्घ संधि होती है। यथा-

अ+अ=आ - उण्ह+अभितत्तो= उण्हाभितत्तो, (उष्ण+अभितप्तः= उष्णाभितप्तः), रिसभ+अजितः=रिसभाजिदो।

अ+आ=आ - विसम+आसवो= विसमासवो, (विषम+आस्रवः= विषमास्रवः), भोयण+आलयो=भोयणालयो।

आ+अ=आ - रमा+अहीणो= रमाहीणो (रमा+अधीनः=रमाधीनः)

आ+आ=आ- विज्जा+आलयं=विज्जालयं, (विद्या+आलय=विद्यालय)

इ+इ=ई - मुणि+इणो=मुणीणो-मुणिणो, (मुनि+इनः=मुनीनः)

इ+ई=ई - मुणि+ईसरो=मुणीसरो, (मुनि+ईश्वरः=मुनीश्वरः)

ई+इ=ई - लच्छी+इंदो=लच्छींदो, (लक्ष्मी+इन्द्रः=लक्ष्मीन्द्रः)

ई+ई=ई - लच्छी+ईसरो=लच्छीसरो, (लक्ष्मी+ईश्वरः=लक्ष्मीश्वरः)

उ+उ=ऊ - साहु+उदयं=साहूदयं, (साधु+उदयं=साधूदयं)

उ+ऊ=ऊ - धेणु+ऊसवो=धेणूसवो, (धेनु+उत्सवः=धेनूत्सवः)

ऊ+उ=ऊ - बहू+उअरं=अहूअरं, (बहू+उदरं=बहूदरं)

ऊ+ऊ=ऊ - बहू+ऊसवो=बहूसवो, (बहू+उत्सवः=बहूत्सवः)

* निम्न लिखित संधि युक्त शब्दों का विग्रह कीजिए-

जहाइण्ण, समारूढं, जीवाजीवा, रमाहारो, निरामिसा, णिराणंदा, देविड्ढी,

रयणपुराहिवई, णदिंदो, बहूढा, महूदयं, विरहाणल, परीसरो।

२ गुणसंधि- अवर्ण के बाद में इवर्ण या उवर्ण हो तो गुण संधि होती है। इ-ई को ए तथा उ-ऊ को ओ गुण हो जाता है।

अ+इ=ए - वास+इसी=वासेसी, (व्यास+ऋषिः=व्यासर्षिः)

आ+इ=ए - रामा+इअरो=रामेअरो, (रामा+इतरः=रामेतरः)

अ+ई=ए - वासर+ईसरो=वासरेसरो, (वासर+ईश्वरः=वासरेश्वरः)

आ+ई=ए - तहा+ईव=तहेव, (तथा+एव=तथैव)

अ+उ=ओ - तव+उवरं=तवोअरं, (तव+उदरं=तवोदरं)

आ+उ=ओ - रमा=उवचिअं=रमोवचिअं, (रमा+उपचितं=रमोपचितं)

अ+ऊ=ओ - सास+ऊसासा=सासोसासा, (श्वास+उच्छ्‌वासः= श्वासोच्छ्‌वासः), धम्म+ऊसवो=धम्मोसवो।

आ+ऊ=ओ - विज्जुला+ऊसासा=विज्जुलोसासा।

❊ निम्नलिखित संधि पदों का विग्रह कीजिए-

दिसेस, पाअडोरू, महेसि, राएणि, जिणेस, देवेस, सुज्जोदय, पुण्णोदर, णाणेस, णाणोदय, पुण्णोदय, हीणोदर, समणोवासग, जहेव, अणासवा, जस्सेह, कहेह, णेव, अण्णोवएस, जिणिंदोवएस, रसावेक्ख, जुत्ताहार, णिरावेक्ख, सुहोवजुत्त, असुहोवओग, साणुकंपा, पज्जओत्तीह, अहोज्जमाण।

३. ह्रस्व-दीर्घ संधि- समासगत शब्दों में रहे हुए स्वर परस्पर ह्रस्व से दीर्घ तथा दीर्घ से ह्रस्व हो जाते हैं।

नियम-१. ह्रस्व का दीर्घ- सत्त+वीसा=सत्तावीसा, अंत+वेई=अंतावेई, पइ+हरं=पईहरं-पइहरं, वारि+मई=वारीमई-वारिमई, वेणु+वणं=वेणूवणं-वेणुवणं, भुअ+यंतं=भुआयंतं-भुअयंतं।

२. दीर्घ का ह्रस्व- जंबू+दीव=जंबुदीव-जंबूदीव, मणा+सिला=मणसिल-मणासिला, णई+सोत्तं=णइसोत्तं-णईसोत्तं, गोरी+हरं=गोरिहरं-गोरीहरं, लच्छी+पई=लच्छिवइ-लच्छीवई, सीया+मुह=सीयमुह-सीयामुह, पुहई+यल=पुहइयल-पुहईयल, बहू+मुह=बहुमुह-बहूमुह,

❊ निम्नलिखित संधिपदों का विग्रह कीजिए-

जणणिसुय, णरवइउलं, जुवइहरं, महणयरं, सम्मदिट्ठी, रयणियर,

मालिणरिंदस्सं, बहुउलं, विविहूसवो, सुयकेवलिभणियं, सुयकेवलिमिसिणो, केवलिगुण, मिच्छदिट्ठि।

३. संधि निषेध अथवा प्रकृतिभाव संधि-
इ और उ के बाद विजातीय स्वर होने पर संधि नहीं होती है।

दणु+इंद=दणुइंद, पहावलि+अरुणो=पहावलि अरुणो, भाणु+इणं=भाणुइणं, बहु+अवऊढो=बहूअवऊढो, वि+अ=विअ, महु+इं=महुइं, माला+ए= मालाए, माला+इ=मालाइ, कया+इ=कयाइ, फला+इ=फलाइ।

अन्य उदाहरण- हु एव, होइ आणंदो, वेसं होइ असाहुणो, वट्टइ आउसु, सो करिस्सइ उज्जोयं, जो ण सज्जइ एएहिं।

४. 'ए' और 'ओ' के बाद विजातीय स्वर होने पर संधि नहीं होती है।

वणे+अडइ=वणे अडइ, रुक्खादो+आगदो=रुक्खादो आगदो, अहो+अँच्छरियं=अहो अच्छरियं, लच्छीए+आणंदो=लच्छीए आणंदो, देवीए+एत्थ=देवीएं एत्थ, एओ+एत्थ=एओ एत्थ।

उदाहरण-पडिणीए असंबुद्धे, एगो एगत्थिए, आसणे उवचिट्ठेज्जा, अणुच्चे अहुए, ण कोवए आयरियं, जो एवं पडिसंचिक्खे, अप्पडिरूवे अहाउयं, इमम्मि लोए अदुवा परत्थ, दुप्पूरए इमे आया, इत्थी विप्पजहे अणगारे, जे के इमे, सावए आसि वाणिए, जुईए उत्तिमाए, गोयमो इणमव्वत्ती, छिन्नो मे संसुओ इमो, संसारो अण्णवो वुत्तो।

५. किसी व्यंजन के लोप होने से बचे हुए स्वर को उद्वृत्त कहते हैं। उद्वृत्त स्वर की किसी स्वर के साथ संधि नहीं होती है।

णिसा+अरो=णिसाअरो, रयणी+अरो=रयणीअरो, बुद्ध+उत्तो=बुद्धउत्तो, सोरिय+उरम्मि=सोरियउरम्मि,तित्थ+अरो=तित्थअरो, दिवा+अरो= दिवाअरो, वणिय+उलम्मि=वणिय उलम्मि।

६. क्रिया पद के प्रत्यय इ, अंति आदि के बाद स्वर आने पर संधि नहीं होती है।

होइ+इह=होइ इह, पेच्छ+इह=पेच्छ इह, करिस्सइ+उज्जोयं=करिस्सइ उज्जोयं।

७. स्वर लोप संधि- प्राकृत में यदि स्वर के बाद स्वर हो तो प्रायः पहले स्वर का लोप हो जाता है।

तिअस+ईसो=तिअसीसो,णीसास+ऊसासो=णीसासूसासो, णर+इंदो=णरिंदो, देव+इंदो=देविंदो, महा+इंदो=महिंदो, दीह+आउया=दीहाउया, धम्म+इड्ढो=धम्मिड्ढो, अहिसेय+अत्थं= अहिसेयत्थं।

※ संधि विच्छेद कीजिए- मणहिरामं, वंसुप्पत्ती, पवणुद्धयं, जहिच्छियं, तस्सुत्ते, तस्सुवरिं, अत्थेत्थ, परवयणुल्लावी, तहेव, इक्खागुकुलुब्भवो, जोगुवओगा, दव्वगुणुप्पादग, तेणिह, विणिच्छिओ।

(२) **व्यंजन संधि-** चूंकि इस संधि का प्रयोग प्राकृत में नहीं होता है तथापि विसर्ग व अनुनासिक आदि होने से कुछ प्रयोग देखे जाते हैं।

नियम-१. अ के बाद आए हुए संस्कृत विसर्ग को प्रायः ओ होता है।

सर्वतः=सव्वदो, पुरतः=पुरओ, अन्तः=अंतो, गणधरः=गणधरो, सन्तः=संतो, मार्गतः=मग्गओ, भवतः=भवओ, पुणः=पुंणो, कुतः=कुदो।

२. पद के अंत में होने वाले हलन्त म् को अनुस्वार होता है।

पवणम्=पवणं, वनम्=वणं, कथनम्=कहणं, वीरम्=वीरं, गिरिम्=गिरिं, सुंदरम्=सुंदरं, महनीयम्= महणीयं।

३. 'म्' के बाद स्वर आने पर विकल्प से अनुस्वार होता है।

उसहं+अजियं=उसहमजियं-उसहं अजियं, धणं+एवं=धणमेवं-धणं एवं, एवं+एवं=एवमेवं-एवं एवं, सयं+एवं=सयमेवं-सयं एवं।

४. ङ, ञ, ण, न का अनुस्वार होता है।

मङ्गलम्=मंगलं, जङ्गलम्=जंगलं, कञ्चुकः=कंचुओ, लाञ्छनम्= लंछणं, मण्डलं=मंडलं,सन्ध्या=संझा, विन्ध्यः=विंझो, उत्कन्ठा=उक्कंठा।

(३) **अव्यय संधि-** जो शब्द सभी विभक्तियों, सभी लिंगों और सभी वचनों में समान रूप से चलते हैं, उन्हें अव्यय कहते हैं।

१. पद के बाद स्थित अव्यय के 'अ' का प्रायः लोप होता है।

केण+अवि=केणवि, कहं+अवि=कहंवि, तं+अवि=तंवि, वीरं+अवि=वीरं वि, धणं+अवि=धणं वि, किं+अवि= किं वि।

२. व्यंजनान्त पद के बाद स्थित इति की 'इ' का लोप होता है तथा स्वर से परे सि

विभक्ति के आने पर द्वित्व होता है।

किं+इति=किं ति, जं+इति=जंति, जुत्तं+इति=जुत्तंति। वीरो+इति=वीरोत्ति, पुत्तो+इति=पुत्तोत्ति, पुरिसो+इति=पुरिसोत्ति, माला+इति=माला त्ति।

३. 'एतत्' आदि सर्वनामों से परे अव्ययों तथा अव्ययों से परे 'त्यद' आदि होने पर प्रारंभिक स्वर का विकल्प से लोप हो जाता है।

एस+इमो=एसमो, अम्हे+एत्थ=अम्हेत्थ, जइ+एत्थ= जइत्थ, जइ+अहं=जइहं, जइ+इमा=जइमा, अम्हे+एव्व=अम्हेव्व।

अभ्यास

प्रश्न १. निम्नलिखित पदों का विच्छेद करके बताएं कि इनमें कौन सी संधि है? अप्पाणं वि, दो वि, ण वि, सव्वे वि, अबंधो त्ति, एगो त्ति, केण वि, फल त्ति, कम्म त्ति, तिट्ठं त्ति, गुरु त्ति, तुम्हेत्थ।

प्रश्न २. अव्यय तथा अव्यय संधि किसे कहते हैं?

प्रश्न ३. संधि की परिभाषा एवं उसके मुख्य भेद लिखिए?

प्रश्न ४. उद्‌वृत्त स्वर किसे कहते हें? उदाहरण सहित लिखें?

प्रश्न ५. संधि न होने के कोई दो नियम लिखिए?

प्रश्न ६. दीर्घ संधि व गुण संधि में क्या अंतर है ?

प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर दीजिए?

(क) प्राकृत भाषा में विसर्ग संधि नहीं होती? ( )

(ख) महा+उवयारो की संधि महोवयारो होती है? ( )

(ग) प्राकृत समासित शब्द दीर्घ से ह्रस्व भी हो जाते हैं? ( )

(घ) अव्यय शब्द अपरिवर्तनीय होते हैं? ( )

(ङ) व्यंजन के लोप होने पर बचे हुए स्वर को उद्‌वृत्त स्वर कहते हैं? ( )

---- o ----

अध्याय-६

कारक-प्रकरण

कारक- किसी क्रिया के संपादन में जिन संज्ञा या सर्वनाम शब्दों को प्रयोग में लाया जाता है, वे कारक कहलाते हैं।

विभक्ति- क्रिया के संपादन में जो सम्बन्ध दिया जाता है वह विभक्ति है। संबन्ध छह हैं- कर्त्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, अधिकरण। संबन्ध और संबोधन को भी क्रिया का प्रायोजक होने से कारक मान लिया जाता है।

प्राकृत में कारक सम्बन्धी नियमकी कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

१. चूंकि चतुर्थी और षष्ठी विभक्तियों का प्रयोग अलग-अलग अर्थों में होता है, किंतु रूप दोनों के प्राय: समान ही बनते हैं।

२. द्वितीया, तृतीया, पंचमी एवं सप्तमी विभक्तियों के स्थान पर कहीं-कहीं षष्ठी विभक्ति होती है। तस्या: मुखं स्मराम: - तिस्सा मुहस्स भरिमो, धनेन लब्ध:- धणस्स लद्धो, चोराद्बिभेति-चोरस्स बीहइ, पृष्ठे केश भार:-पिट्ठस्स केसभारो।

३. द्वितीया तथा तृतीया विभक्तियों के स्थान पर कहीं-कहीं सप्तमी विभक्ति होती है। ग्रामं वसामि नगरे न यामि-गामे वसामि णयरे ण जामि, तैरलंकृता पृथ्वी-तेसु अलंकिया पुहवी।

४. पंचमी विभक्ति के स्थान पर कहीं-कहीं तृतीया एवं सप्तमी विभक्तियां होती हैं। चोरद्बिभेति-चोरेण बीहइ, अन्त:पुराद्रन्त्वा आगतो राजा-अन्तेउरे रमिउमागओ राया।

५. सप्तमी विभक्ति के स्थान पर कहीं-कहीं द्वितीया विभक्ति होती है।

विद्युद् ज्योतं स्मरति रात्रौ- विज्जुज्जोयं भरइ रत्तिं।

६. प्राकृत में एकवचन और बहुवचन ही होता है, द्विवचन नहीं। द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का ही प्रयोग होता है।

७. लिङ्ग की कुछ अंशों में ही रक्षा हो पाती है, सर्वत्र नहीं। लिंग का निर्णय प्राय: शब्द के अंतिम वर्ण पर निर्भर करता है।

८. प्राकृत में व्यञ्जनान्त शब्दों का अभाव है। अतः ऐसे शब्दों के अंतिम व्यञ्जन का, या तो लोप हो जाता है या फिर उसे स्वर सहित व्यंजन में बदल दिया जाता है।

कारकों में जिन सात विभक्तियों का प्रयोग किया जाता है, उनमें सु आदि प्रत्यय लगतें हैं, अतः उन शब्दों को 'सुबन्त' कहते हैं। शब्दों को उनकी प्रकृति का ध्यान रखते हुए मूलतः पांच प्रकारों में बाँटा गया है- १. अवर्ण से अन्त होने वाले शब्द अकारान्त कहलाते हैं, २. इसी प्रकार इकारान्त, ३. उकारान्त, ४. ऋकारान्त तथा ५. हलन्त शब्द भी जानना चाहिए। हलन्त शब्द में केवल राय (राजन्) तथा अप्प (आत्मन्) शब्दों के प्रयोग हेतु नियमों का अस्तित्व है।

यहाँ संस्कृत विभक्तियों के एकवचन तथा बहुवचन का प्राकृत रूपान्तरण अकारान्त शब्दों के प्रयोग हेतु प्रस्तुत है-

विभक्ति	**एकवचन**		**बहुवचन**	
	संस्कृत	प्राकृत	संस्कृत	प्राकृत
प्रथमा (कर्त्ता-ने)	सु (सि)	डो (ओ) ,ए	जस्	लोप
द्वितीया (कर्म-को)	अम्	म्	शस्	लोप
तृतीया (करण-ने, से, के द्वारा)	टा	ण,णं	भिस्	हि,हिं,हिँ
चतुर्थी (संप्रदान-के लिएं)	ङे	स्स	भ्यस्	ण,णं
पंचमी (अपादान-से पृथक् होना)	ङसि	त्तो,दो,हि,हिंतो, ओ,दु,उ,लोप	भ्यस्	त्तो,दो(ओ),दु(उ),हि, हिंतो, सुंतो,लोप,
षष्ठी (संबंध-का के की)	ङस	स्स	आम्	ण,णं
सप्तमी (अधिकरण-में,पर)	ङि	ए,म्मि,म्हि	सुप्	सु,सुं
संबोधन (हे, भो)	सु	लोप	जस	लोप

* जस, शस्, ङसि, त्तो, दो प्रत्ययों के आने पर शब्दांत अकार को दीर्घ हो जाता है। टा के आदेश ण तथा शस् के आने पर शब्दांत अ को ए हो कर विभक्ति जुड़ती है। भिस्, भ्यस्, सुप् के आने पर अ को ए हो जाता है। संयुक्त व्यंजन के आने पर दीर्घ स्वर को ह्रस्व हो जाता है।

अकारांत पुल्लिंग वीर शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	वीरो, वीरे(अर्द्धमागधी)	वीरा
द्वितीया	वीरं	वीरा,वीरे
तृतीया	वीरेण, वीरेणं	वीरेहि,वीरेहिं
चतुर्थी	वीरस्स,वीराय(अर्द्धमा.)	वीराण,वीराणं
पंचमी	वीरत्तो,वीरादो,वीराओ,वीराहितो,	वीरासुंतो,वीरादो
	वीरादु,वीराउ,वीरहि,वीरा	वीरत्तो, वीरादु
षष्ठी	वीरस्स	वीराण,वीराणं
सप्तमी	वीरे,वीरम्मि	वीरेसु,वीरेसुं
संबोधन	वीर! वीरे! वीरो!	वीरा!

* जिण, जिणिंद, तित्थयर, सावय, समण, अजिय, विणय, णर, मणुज, किविण् (कृपण), खत्तिय (क्षत्रिय), तस, देव, थावर, पउम (पद्म), धम्म, पोग्गल (पुद्गल), सांत आदि अकारान्त शब्दों के रूप भी वीर शब्द की तरह चलते हैं।

विशेष- (१) शौरसेनी में पंचमी के दोनों वचनों में 'आदो' तथा 'आदु' ये दो प्रत्यय विशेष रूप से होते हैं- वीरादो, वीरादु। सप्तमी के एकवचन में 'म्हि' प्रत्यय का प्रयोग भी होता है -वीरम्हि

(२) अर्धमागधी में भगवत् शब्द का प्रथमा एकवचन में भगवं-भयवं रूप भी बनते हैं। प्रथमा के एकवचन को एकारान्त होता है- कायें, जोगे। मण, वच, काय आदि शब्दों के तृतीया एकवचन में मणसा, वचसा, कायसा, रूप भी बनते हैं। कम्म तथा धम्म शब्द के तृतीया एकवचन में कम्मुणा, धम्मुणा रूप भी बनते हैं।

इकारान्त तथा उकारान्त (पु.) शब्दों के प्रत्यय

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	दीर्घ	दीर्घ, णो, अओ, अउ
द्वितीया	म्	णो, लोप
तृतीया	णा	हि, हिं, हिँ
चतुर्थी	स्स, णो	ण, णं
पंचमी	त्तो, दो, हि, णो, दु, हिंतो	त्तो, दो, हि, हिंतो, सुंतो
षष्ठी	स्स, णो	ण, णं
सप्तमी	म्मि	सु, सुं
सम्बोधन	सामान्य, लोप	अउ, अओ, णो, लोप

इकारान्त मुणि शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	मुणी	मुणी, मुणिणो
द्वितीया	मुणिं	मुणी, मुणिणो
तृतीया	मुणिणा	मुणीहि, मुणीहिं
चतुर्थी	मुणिस्स, मुणिणो,	मुणीण, मुणीणं
पंचमी	मुणित्तो, मुणिदो, मुणीहि, मुणीओ,	मुणिहिंतो, मुणिणो
	मुणीउ, मुणीदु, मुणीणो, मुणिहिंतो	मुणीहो, मुणिसुंतो
षष्ठी	मुणिस्स	मुणीण, मुणीणं
सप्तमी	मुणिम्मि	मुणीसु, मुणीसुं
संबोधन	मुणि!	मुणी!

❊ रवि, करि (हाथी), हरि, विष्णु, अग्नि, उवहि, वारि, गिरि, णिहि, जलहि, पाणि, विहि, णेमि आदि शब्दों के रूप मुनि की तरह चलते हैं। ईकारांत भी इसी तरह चलते हैं; किन्तु संयुक्त विभक्ति के आने पर दीर्घ को ह्रस्व होकर विभक्ति लगती है। इनके रूप प्राय: राया शब्द के समान चलते हैं।

उकारान्त तरु शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	तरू	तरू,तरुणो,तरउ, तरओ,
द्वितिया	तरुं	तरू, तरुणो
तृतीया	तरुणा	तरूहि, तरुहिं
चतुर्थी	तरुणो, तरुस्स	तरूण, तरुणं
पंचमी	तरुणो, तरुत्तो, तरुदो, तरूओ, तरुहिंतो	तरुओ,तरुत्तो,-दु,-उ, तरूसुंतो, तरुदो
षष्ठी	तरुणो, तरुस्स	तरूण, तरुणं
सप्तमी	तरुम्मि	तरूसुं, तरुसु
संबोधन	तरु, तरू	तरू,तरुणो,तरउ, तरओ,

* भाणु (सूर्य), गुरु, वाउ, इंदु, पसु, विण्हू, रिउ, सत्तु, सिंधु, मिउ, विहु, सिसु, भाउ (भाई), पिदु आदि शब्दों के रूप तरु के समान चलते हैं। ऊकारांत शब्दों के रूप भी इसी तरह चलते हैं; किन्तु संयुक्त विभक्ति के आने पर दीर्घ को ह्रस्व होकर विभक्ति लगती है।

ऋकारान्त पितृ (पिआ, पिउ, पिदु, पिअर) शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	पिआ, पिअरो,पिऊ,पिदु	पिअरा,पिऊ,पिउणो,पिअऊ,पिअवो
द्वितीया	पिअरं	पिअरा, पिअरे,पिऊ,पिउणो
तृतीया	पिअरेण-णं, पिउणा	पिअरेहि,-हिं-हिँ,पिऊहि,-हिं,-हिँ
चतुर्थी	पिअरस्स,पिउणो,-स्स	पिअराण,-हिं,-हिँ, पिऊहि,-हिं,-हिँ
पंचमी	पिअरा,पिअरत्तो,पिअराओ,-उ,-दु,-दो,पिउणो,पिउत्तो,पिऊओ,	पिउहिंतो, पिउसुंतो, पिअरेहि,पिऊओ, पिऊदो
षष्ठी	पिअरस्स, पिउस्स,-णो	पिअराण,-णं, पिऊण,-णं
सप्तमी	पिअरे, पिअरम्मि, पिउम्मि	पिअरेसु,-सुं, पिऊसु,-सुं
संबोधन	पिअ! पिअर!	पिअरा, पिऊ,पिउणो,पिअउ,ओ,-वो

* दातृ (दाउ, दायार) तथा भ्रातृ (भाउ, भायर) आदि पुंलिंग ऋकारान्त

शब्द के रूप ऋ को उ अथवा अर होकर पितृ (पिउ, पिअर) शब्द के समान चलते हैं।

हलन्त राजन् के शब्द रूप

विभक्ति	**एकवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा	राया	राया,-णो, राइणो
द्वितीया	रायं, राइणं	राया,-णो, राए, राइणो
तृतीया	राएण-णं, राइणा, रण्णा	राएहिं,-हि,-हिँ, राईहि,-हिं,-हिँ
चतुर्थी	रायस्स, राइणो, रण्णो	रायाण,-णं, राईण,-णं
पंचमी	रायत्तो, राया-ओ,-उ,-हि,-हिंतो,-सुंतो; राइणो, रण्णो, राइत्तो, राईओ,	
षष्ठी	रायस्स, राइणो, रण्णा,	रायाण-णं, राईण,-णं
सप्तमी	राये, रायम्मि, राइम्मि,	राइसु,-सुं, राईसु-सुं
संबोधन	राय, राया	राया, रायाणो, राइणो

* आत्मन् शब्द अप्प एवं अप्पाण शब्दों में प्रयुक्त होता है। अप्प शब्द के रूप राजन् शब्द की तरह होते हैं, जबकि अप्पाण शब्द के रूप वीर शब्द की तरह। इतनी विशेषता है कि आत्मन् शब्द के तृतीया विभक्ति के एकवचन में अप्पणिआ तथा अप्पणइया-ये दो रूप अधिक होते हैं। शौरसेनी में 'आदा' का भी प्रयोग होता है। अर्द्धमागधी में आया और आता का भी प्रयोग होता है। इनके रूप प्राय: राया शब्द के समान चलते हैं।

स्त्रीलिंग-शब्द-

आकारांत स्त्रीलिंग सुनंदा शब्द के रूप

विहत्ती (विभक्ति)	**एकवयणं(एकवचन)**	**बहुवयणं(बहुव.)**
पढमा (प्रथमा)	सुणंदा (विभक्ति लोप)	सुणंदा, सुणंदाओ, सुणंदाउ
वीया (द्वितीया)	सुणंदं (म्)	सुणंदा, सुणंदाओ
तइया (तृतीया)	सुणंदाए -आ, -इ,-अ	सुणंदाहि, सुणंदाहिं
चउत्थी (चतुर्थी)	सुणंदाए -आ, -इ,-अ	सुणंदाण,सुणंदाणं
पंचमी (पंचमी)	सुणंदाए -आ,-इ,-ओ,-त्तो,-उ	सुणंदाहिंतो,सुणंदासुंतो,(त्रहीं)

छट्ठी (षष्ठी)	सुणंदाए -अ,-आ, -इ	सुणेदाण,सुणंदाणं
सत्तमी (सप्तमी)	सुणंदाए -अ,-आ, -इ	सुणंदासु, सुणंदासुं
संबोहणं (संबोधन)	सुणंदा!, सुणंदे!	सुणंदा, सुणंदाउ, सुणंदाओ!

❊ णंदा, भद्दा, खमा, चंदणा, वंदणा, गंगा, चंचला,कत्ता, सिला, सुभद्दा, चेदणा, अंजणा, भज्जा, पदमा, कहा, कण्णा, साला, बालिगा, माला, सीदा, रमा, लदा, सुदा, विमला, अंबा, रंजणा, इक्खा, भिक्खा, शिक्खा, दिक्खा, साहणा, आराहणा, गीदा आदि शब्दों के रूप सुनंदा के समान चलते हैं।

❊ ऋकारान्त- मातृ आदि ऋकारान्त स्त्रीलिंग शब्दों के ऋकार को सि आदि सभी विभक्तियों के स्थान पर आ आदेश होकर सुणंदा शब्द के समान रूप चलते हैं। देवी के अर्थ में जब माता शब्द का प्रयोग होता है तब मातृ के ऋ को अरा आदेश होकर मायरा आदि रूप बनते हैं।

इकारांत स्त्रीलिंग 'शुद्धि' शब्द के रूप

विहत्ति	**एगवयणं**	**बहुवयणं**
पढ़मा	सुद्धी (दीर्घ+विभक्ति लोप)	सुद्धी, सुद्धीउ, सुद्धीओ
वीया	सुद्धिं (म्+ह्रस्व)	सुद्धी, सुद्धीउ,सुद्धीओ
तिदिया	सुद्धीअ,-आ,इ,ए	सुद्धीहि, सुद्धीहिं
चउत्थी	सुद्धीअ,-आ,इ,ए	सुद्धीण,सुद्धीणं
पंचमी	सुद्धीअ -आ,इ,ए,उ,ओ	सुद्धित्तो,-ओ,हिंतो,सुंतो
छट्ठी	सुद्धीअ -आ,इ,ए	सुद्धीए,सुद्धीणं
सत्तमी	सुद्धीअ -आ,इ,ए	सुद्धीसु,सुहीसुं
संबोहणं	सुद्धि! सुद्धी!	सुद्धी,सुद्धीउ,सुद्धीओ!

❊ शुद्धि शब्द की तरह ही सभी इकारांत, ईकारांत, उकारांत, ऊकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के रूप भी चलते हैं, किंतु यह विशेषता है कि ईकारांत शब्दों के प्रथमा व द्वितीया विभक्ति के सि, जस् और शस् प्रत्यय में विकल्प से 'आ' आदेश भी होता है।

❊ शौरसेनी तथा अर्द्धमागधी में तृतीया एकवचन से लेकर सप्तमी एकवचन तक 'ए' प्रत्यय तथा कहीं 'इ' प्रत्यय भी होता है। साहित्य में उपरोक्त सभी

प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

नपुंसकलिंग शब्द-

अकारांत नपुंसकलिंग 'वन(वणं)' शब्द के रूप

विहत्ति	**एगवयणं**	**बहुवयणं**
पढमा	वणं (सु को म् आदेश)	वणाणि, इं, इँ
विदिया	वणं (म्)	वणाणि, इं, इँ

✻ प्रथमा, द्वितीया विभक्ति के अतिरिक्त अकारांत नपुंसक लिंग के शेष रूप पुल्लिंग के समान चलते हैं। इकारांत नपुंसक लिंग शब्दों के रूप मुनि के समान तथा उकारांत शब्दों के तरु के समान रूप चलते हैं। ईकारान्त, ऊकारांत में प्रथमा-एकवचन में ह्रस्व होकर 'म्' विभक्ति का प्रयोग होता है, शेष समानता है।

✻ वण शब्द के समान ही पवयण, णाण, वयण, चयण, मण, धण, पोत्थय, जल, सुह, सत्थ, वत्थ, उज्जाण, सवण, णयण, झाण, ठाण, माण, रयण, दंसण, चरित्त, मित्त, भत्त, विस, णीरय, कुमुद, सुयंध आदि के रूप भी बनते हैं।

✻ सर्वनाम शब्द- जो संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त किए जाते हैं; वे सर्वनाम शब्द कहलाते हैं। वे तीनों लिंगों में होते हैं।

पुल्लिंग सर्वनाम सव्व (सर्व) शब्द के रूप

विहत्ती	**एगवयणं**	**बहुवयणं**
पढमा	सव्वो	सव्वे,
वीया	सव्वं	सव्वे, सव्वा
तइया	सव्वेण,सव्वेणं	सव्वेहि, सव्वेहिं
चउत्थी	सव्वस्स	सव्वेसिं, सव्वाण-णं
पंचमी	सव्वत्तो,सव्वा-ओ,-उ-हि,-हिंतो	सव्वत्तो,सव्वा-ओ,-उ,-हि,-सुंतो,
छट्ठी	सव्वस्स	सव्वेसिं,सव्वाण-णं
सत्तमी	सव्वस्सिं-म्मि,-म्हि-सव्वत्थ	सव्वेसु,सव्वेसिं

✻ स्त्रीलिंग में सव्वा (सर्वा) शब्द के रूप सुणंदा के समान चलेंगे। नपुंसक

लिंग में प्रथमा-द्वितीया विभक्ति में 'वण' शब्द के समान तथा शेष पुलिंग 'सव्व' शब्द के समान रूप चलेंगे।

* क (किं-क्या), ज (यत्-जो), त (तद्-वह), तथा उहय-उभय आदि शब्दों के रूप भी उपरोक्त प्रकार समझना चाहिए। यद् शब्द को स्त्रीलिंग में जी आदेश होकर भी रूप बनते हैं। तद् शब्द को पुल्लिंग में 'सो' स्त्रीलिंग में 'सा, ती' तथा नपुंसकलिंग में 'तं' आदेश होता है।

पुल्लिंग इदम् (इम) शब्द के रूप

पढमा	इमो, अयं, इणं,	इमे, णे
बीया	इमं, णं, इणं	इमे, णे
तइया	इमेण, णेण, णेणं	इमेहिं,णेहि, णेहिं
चउत्थी	इमस्स, अस्स, से	इमाण, सिं,
पंचमी	इमाओ, अत्तो, आदु	इमाहिंतो, आदो, आहंतो
छट्ठी	इमस्स, अस्स, से	इमाण, सिं,
सत्तमी	इमम्मि, अस्सिं, इह	इमेसु, इमेसिं

* इदम् शब्द स्त्रीलिंग में प्रथमा एकवचन में इमिआ रूप विशेष है, शेष पुल्लिंग के समान। नपुंसकलिंग में प्रथमा-द्वितीया में इदं, इणं, इणमो रूप विशेष हैं, शेष रूप पुल्लिंग के समान चलते हैं।

* अदस् (अमु) पुल्लिंग के रूपों में प्रथमा में अम्ह तथा सप्तमी में अमम्मि, इमम्मि रूप विशेष बनते हैं। एतद् (एअ) पुल्लिंग प्रथमा में एस, एसो, इणं, इणमो, पंचमी में एत्तो, एत्ताहे, एत्थ, षष्ठी में से-सिं, सप्तमी में अयम्मि-इयम्मि रूप विशेष बनते हैं। स्त्रीलिंग के प्रथमा में एसा रूप बनता है।

पुल्लिंग तद् (ण, सो =वह) शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	सो, ण	ते, णे
द्वितीया	तं, णं	ते, ता, णे, णा

तृतीया	तेण,तेणं,तिणा,	तेहिं,तेहिं,तेहिँ
	णेण,णेणं,णिणा	णेहि,णेहिं,णेहिँ
चतुर्थी-षष्ठी	तास,तस्स,से	तास,तेसिं,सिं,ताण,ताणं
पंचमी	तो,तत्तो,तम्हा,ताओ,	तत्तो,ताओ,-उ,-हि,-हिंतो,-सुंतो
	ताउ,ताहि,ताहिंतो,ता	तेहि,तेहिंतो,तेसुंतो
सप्तमी	ताहे,तइया,तहिं,तम्मि,तस्सिं,तत्थ	तेसु,तेसुं

नपुंसकलिंग तद् (णं, तं)=वह शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	तं,णं	ताइं,ताणि,णाइं,णाणि
द्वितीया	तं,णं,	ताहं,ताणि,णाहं,णाणि

- शेष रूप पुल्लिंग के समान चलते हैं।

स्त्रीलिंग तद् (सा, णा)=वह शब्द के रूप

विभक्ति	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	सा,णा	ताओ,ताउ,ता,
		तीओ,तीआ,ताउ,ता
द्वितीया	तं,णं	तीओ,तीआ,तीउ,ती,तीओ,ता
तृतीया	तीअ,-आ,-इ,-ए	तीहि,-हिं,ताहि,-हिं,-हिं,
	ताअ,-इ,-ए,णाअ,-ए	णाहि,-हिं,-हिँ
च.+ष.	तिस्सा,तीसे,-अ,-आ,-इ,	सिं,तेसिं,तास,ताण,ताणं
	तास,से,ताअ,-इ,-ए	
पंचमी	तीअ,-इ,-उ,-ए,-ओ,-हिंतो,	तित्तो,तीउ,-ओ,तत्तो,
	ताअ,-इ,-उ,-ए,तास,से,तो,	ताउ,ताहिंतो,तासुंतो
	तत्तो,तम्हा,	
सप्तमी	तीअ,-इ,-ए,-आ,ताअ,-इ,-ए,	तीसु,तीसुं,तासु,तासुं

सर्वनाम अम्ह (अस्मद्) शब्द के त्रिलिंगों के रूप

विहत्ती	एगवयणं	बहुवयणं
पढ़मा	अहं,हं	अम्हे
विदिया	मम,ममं,मं	अम्हे
तिदिया	मए,मया	अम्हेहि,अम्हेहिंतो
चउत्थी+छट्ठी	मम,अम्ह,मज्झ,मे,महं	अम्हाण,अम्हाणं,ममाण-णं
पंचमी	ममत्तो,ममदो,ममाओ,	अम्हत्तो,अम्हाहिंतो,ममाहिंतो
सत्तमी	ममम्हि,मम्हि,अम्हम्मि	अम्हेसु,अम्हेसुं,ममसु,-सुं

सर्वनाम तुम्ह (युस्मद्) शब्द के त्रिलिंगों के रूप

विहत्ती	एगवयणं	बहुवयणं
पढ़मा	तुमं,तुं,तुवं,तुह	तुम्हे,तुम्ह
विदिया	तुम,तुमं,तुं,तुह	तुम्हे,वो
तिदिया	तए,तया,तुमे	तुम्हेहि,तुम्हेहिं,तुज्झेहिं
च.-छ.	ते,तुज्झ,तुम्म,तुम्हं,तुम्ह	तुम्हाणं,तुम्हाणं
पंचमी	तुमाओ,तुमाहिंतो,तुज्झ	तुम्हत्तो,तुज्झत्तो
सप्तमी	तुमम्हि,तुम्हिं	तुम्हेसु,तुम्हेसुं

* संख्यावाचक शब्दों के रूप

प्राकृत भाषा में 'एक' के लिए प्राय: एक्क (पुलिंग), एक्का (स्त्री) तथा एक्कं (नपुं.) शब्दों का प्रयोग होता है। इनकी रूपावली क्रमश: सव्व, सव्वा तथा सव्वं सर्वनाम शब्द की तरह चलती है। 'एक' के लिए शौरसेनी में 'एगो' तथा अर्द्धमागधी में 'एओ' का भी प्रयोग होता है।

संस्कृत के द्वि, त्रि, चतुर्, पंचन्, षष्, सप्तन् आदि शब्दों को प्राकृत में क्रमश: दु, ति, च, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, णव आदि आदेश हो जाते हैं तथा इनके रूप बहुवचन में ही चलते हैं।

संख्यावाचक दु (द्वि) शब्द के रूप ति (त्रि) शब्द के रूप

प्र.+द्वि	दो,दुवे,दोण्णि,वे,वेण्णि	तिण्णि
तृतीया	दोहि,-हिं,-हिँ,वेहि,-हिं,-हिँ	तीहि,-हिं,-हिँ
च.+ष.	दोण्हं,दुण्हं,वेण्हं	तिण्ह,तिण्हं
पंचमी	दुत्तो,दोओ,-उ,-हिंतो,-सुंतो, वेओ,-उ,-हिंतो,-सुंतो	तित्तो, तीओ,-उ, तीओहिंतो,-सुंतो
सतमी	दोसु,-सुं,वेसु,-सुं	तीसु,-सुं
	चउ (चतुर्) शब्द के रूप	**पंच (पंचन्) शब्द के रूप**
प्र.+द्वि	चउरो, चत्तारि, चदुरो	पंच, पण्ण, पण
तृतीया	चऊहि,-हिं,हिँ	पंचेहि, -हिं,-हिँ
च.+ष.	चउण्ह,-हं	पंचण्ह,-हं
पंचमी	चउत्तो, चऊओ... आदि	पंचत्तो, पंचाओ... आदि
सत्तमी	चऊसु,-सुं	पंचसु, पंचसुं

- इसी तरह अन्य संख्यावाची शब्दों के रूप भी चलते हैं।

कारकों के संबंध में विशेष-

(१) कर्त्ता कारक-यह संज्ञा अथवा सर्वनाम वाचक प्रथम विभक्ति है, कर्त्ता के अर्थ में इसका प्रयोग होता है।

(२) कर्मकारक- कर्त्ता जिसको चाहता है, प्रभावित करता है वह कर्म है। कर्म में यह द्वितीया विभक्ति होती है।

१. दुह, याच, पच, दंड, रुंध, पुच्छ, चि, वद, सास, मह, मुस, जि आदि क्रियाओं के योग में द्वितीया होती है। यथा-गावं दुहति। भोयणं याचते। ओदणं पचति, छत्तं सासति। दहिं महइ। चोरं मुचेति। कम्माणि जयति। .... आदि

२. देश, काल, भाव, गंतव्य में द्वितीया होती है। यथा- राजपुरं समति। मासं असति। गोदोहणं करोति। कोसं चलति।

३. गत्यर्थक=गम, चल, बुध्यर्थक-बुह, णा, वेद, विद; प्रत्यवसानार्थक-अक्ख, अद, भुज; कर्मवाचक- पढ, उच्चर आदिमें कर्म (द्वितीया) का प्रयोग होता है। यथा- सुत्तणो सग्गं गच्छति। णाणं णादि। वेदं वेदति। फलं भक्खदि।

४. उव, अणु, अधि और आ पूर्वक 'वस' धातु में द्वितीया होती है। यथा- गामं उववसदि। समणं अणुवसदि। पुरं अधिवसदि। गुरुवणं आवसदि। पव्वयं अधिणिवसदि।

५. समया, णिगसा, हा, धिग, अंतरा, अंतरेण, अदि, जेण, तेण, विणा, सव्वदो, उहयदो, परिदो, अहिदो आदि के योग में भी द्वितीया होती है। यथा- समयं पव्वयं णई। णिअसा पव्वयं वणं। हा! गिहवदिं वाही। दो णदिं अंतरा गामं। अंतरेण धम्मं सुहं ण। अइवुड्ढिं कुणदि। जेण जिणमग्गं सरदि, तेण कल्लाणं हवदि। सव्वदो णयरं वणं अत्थि। उहयदो वणं। धम्मं विणा ण गदी। परिदो दुवारं अत्थि।

६. लक्खण, अभि, वीप्सा, इत्थंभूत, पडि, परि, अनु आदि के योग में तथा क्रिया विशेषण के योग में द्वितीया होती है। सप्तमी के योग में द्वितीया भी होती है।

(३) करणकारक- जो क्रिया की सिद्धि में सर्वाधिक सहायक होता है, वह करण कहलाता है। करण में तृतीया विभक्ति होती है।

१. प्रकृति, फल प्राप्ति, सह-अर्थ तथा कार्यसिद्धि के अर्थ में तृतीया होती है। यथा- सहावेण सुंदरो उज्जाणो। सुक्कज्झाणेण मुत्ती। सो पिदुणा सह गच्छदि। आसणेण झाणं।

२. 'अंग वियारत्थ लक्खणे' अंग विकार के अर्थ में तृतीया होती है। जैसे-णेत्तेण हीणो। कण्णेण बहिरो। पादेण खंजो।

३. इत्थंभूत अर्थ में तृतीया होती है। जहा (जैसे)-तवेण तवस्सी। मोणेण मुणी। णाणेण णाणी।

४. 'हेदुम्मि तदीया' हेतु अर्थ में तृतीया होती है। यथा- सो साहणाए अत्थ वसदि। दाणेण पत्तं तूसदि।

५. किं, कज्ज, अट्ठ, पयोजणं, अलं के योग में तृतीया होती है - धणेण किं। छत्तेण कज्जं। किमट्ठं णरिंदेण याचते। अलं समेण।

६. शपथ अर्थ में तृतीया होती है। जहा-सच्चेण सामी।

(४) संप्रदान कारक- देना, प्रदान करना, रुचना, नमस्कार, धारण, तादर्थ, स्वाहा तथा स्वधा आदि के अर्थ में संप्रदान कारक (चतुर्थी विभक्ति) का प्रयोग होता है।

१. क्रोध, द्रोह, ईर्ष्या, इच्छा या असूया के अर्थ में चतुर्थी होती है। यथा- दुट्ठो सज्जणस्स कोहदि।

२. प्रशंसा, छिपाना, चिह्न, शपथ लेना अर्थ में चतुर्थी होती है। जहा- णाणिस्स सलाहयति। पावस्स गुहति। उज्जाणस्स चिट्ठति। सिरस्स सवति।

३. गति, हित, सुख, भद्र, क्षेम, कल्याण अर्थ में चतुर्थी होती है।

४. प्राकृत में चतुर्थी और षष्ठी के रूप एक जैसे बनते हैं। इनकी पहचान वाक्य रचना से होती है।

(५) अपादान कारक- पदार्थ से विच्छेद होने के अर्थ में अपादान कारक पंचमी विभक्ति होती है।

१. जुगुप्सा, विराम, प्रमाद, भय, हेतु तथा निवारण अर्थ में पंचमी होती है। यथा- पावादो जुगुच्छते। पावादो विरमति। धम्मादो पमादयते। चोरादो विभेति। अण्णाणी णियमादो मिच्छादिट्ठि। गुरु पावादो णिवारयति।

२. उत्पत्ति, लज्जा, विना, व्यवधान तथा पराजित के अर्थ में पंचमी होती है। यथा- हिमालयादो गंगा णीसरदि। जणादो लज्जेदि। धम्मादो विणा सग्गं णत्थि। वीरत्तो मोहो खीयदि।

३. दिशा, विदिशा या अन्य किसी स्थान से आने-जाने या टूटने-छूटने के अर्थ में पंचमी का प्रयोग होता है। जहा-सो पुव्वादो आगच्छइ। सो पावादो विरमदि। ते णयरादो गच्छन्ति।

(६).सम्बन्ध कारक- का, के, की, संबंध अर्थ में षष्ठी होती है।

१. हेतु, हिंसा, कृत तथा समक्ष अर्थ में षष्ठी होती है। यथा-भोयणस्स गच्छति। दुट्ठो जणाण हंति। धम्मस्स कडे मंदिरं। गुरुए समक्खे।

२. लक्षित अर्थ को प्रकट करने में षष्ठी होती है। यथा सम्मेद-सिहरस्स उच्चट्ठाणे सुवण्ण भद्द कूडो अत्थि।

३. दूर और पास के अर्थ में षष्ठी होती है। यथा-वेसालिए कुंडलपुरो दूरो अत्थि।रायपुरस्स समीपे वणं अत्थि।

४. 'कृत' प्रत्ययों के योग में कर्त्ता और कर्म में षष्ठी होती है।मंतस्स झाणं। सेवगस्स पूजा।

५. आयुस्स-मद्द-भद्द-कुसल-सुह-अत्थ-हितत्थे छट्ठी। जोगा-उचित-उवजुत्त-अणुरूव-सरिसत्थे छट्ठी। इनके योग में षष्ठी होती है।

(७) अधिकरण कारक- आधार का नाम अधिकरण है। में, पे, पर के प्रयोग होने पर सप्तमी होती है।

१. जिस समय कोई कार्य होता है, उस समय के योग में सप्तमी होती है। यथा- कत्तियमासस्स किण्ह चउद्दसीए णिव्वुदो महावीरो (कार्तिकमास की कृष्ण

चतुर्दशी में महावीर स्वामी मुक्त हुए)।

२. साधु, असाधु, निमित्त तथा कारणवाची शब्दों के योग में सप्तमी होती है। यथा- जिणालयम्मि साहू अत्थि (जिनालय में साधु है), कम्मखयम्मि तवे (कर्मक्षय में तप)।

३. जिस भाव से दूसरी क्रिया का होना लक्षित हो, वहाँ सप्तमी होती है। यथा- गोसु दुद्धासु गदे (गायों के दुहकर जाने पर)।

४. जहाँ किसी वस्तु में विशेषण द्वारा विशेषता बताई जाती है, वहाँ सप्तमी होती है। यथा- साहुसु सेट्ठो (साधुओं में श्रेष्ठ)।

५. स्नेह, आदर, अनुराग तथा हेतु अर्थ में सप्तमी होती है। यथा- धम्मेसु अणुरागो (धर्म में अनुराग), आगमेसु सद्धा (आगम पर श्रद्धा), मुणीसु समादरो (मुनियों में समादर), देववसं बुड्ढी खए (बुद्धिक्षय दैववश है)।

६. कुशल, पटु, प्रवीण, सौण्ड, पांडित्य अर्थ में सप्तमी होती है। यथा- ववहारे कुसलो वीरो। सेणिगो कलाए पडु। गणहरो णाणे पंडिए।

(८) संबोधन- निमंत्रण, आमंत्रण, आह्वान आदि अर्थ में संबोधन का प्रयोग होता है।

यथा- वीर! तव मग्गो अदि उत्तमो अत्थि। समणा! साहणामग्गो अदिदुक्कडो अत्थि। देवि!गच्छ। सिस्स! तिट्ठ।

संबोधन में प्राय: प्रथमा की तरह ही रूप बनते हैं। इसके एकवचन में दीर्घांत को ह्रस्व हो जाता है, ह्रस्व का ह्रस्व ही रहता है कहीं दीर्घ भी हो जाता है।

अभ्यास

प्रश्न १. कारक एवं विभक्तियों के संदर्भ में प्राकृत भाषा की प्रमुख विशेषताएं लिखिए।

प्रश्न २. अकारान्त पुल्लिंग 'जिण' शब्द के रूप लिखिए।

प्रश्न ३. 'मुनि' और 'गुरु' शब्दों के प्रथमा बहुवचन, तृतीया व चतुर्थी एकवचन तथा षष्ठी एकवचन के रूप लिखो।

प्रश्न ४. 'पितृ' शब्द के चतुर्थी एकवचन 'राजन्' शब्द के षष्ठी एकवचन के प्राकृत रूप लिखिए।

प्रश्न ५. नपुंसकलिंग और स्त्रीलिंग प्राकृत रूपों में अकारान्त पुल्लिंग रूपों से क्या विशेषता है ? उदाहरण सहित तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

---- o ----

अध्याय-७

क्रिया-प्रकरण

*** धातुरूपों की कुछ विशेषताएँ-**

१. शब्द रूपों की तरह धातु अर्थात् क्रियारूपों में भी द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग होता है। यथा-हसतः (द्विवचन) के स्थान पर हसन्ति रूप प्रयुक्त होता है।

२. 'अ' जोड़कर व्यंजनान्त धातुओं को स्वारांत बनाकर प्रयोग किया है। यथा- भण्-भण, हस्-हस।

३.भ्वादिगण के धातुओं की तरह अन्य गणों के धातुरूप बनते हैं। यथा- तनोति-तणइ, रुष्यति-रूसइ।

४. प्रायः परस्मैपद का प्रयोग होता है। यथा-गम्यते-गच्छदि। लभते-लहइ, पठ्यते-पढदि, लिख्यते-लिहदि-इ।

५. काल की दृष्टि से वर्तमान काल-लट् लकार, भूतकाल-लिट् लकार,भविष्यत काल- लृट् लकार तथा अन्य तीन प्रकारों में आज्ञार्थक-लोट्, विध्यर्थक-विधि लिंग, एवं क्रियातिपत्ति-लृङ लकार में धातुरूपावली दृष्टिगोचर होती है, शेष लकारों में नहीं। आज्ञार्थक एवं विध्यर्थक प्रायः समान चलते हैं। भूतकाल के लिए प्रायः सहायक क्रियाओं के साथ कृदन्त रूपों को व्यवहार में लाया जाता है। यथा-वहंतो आसि।

* **वर्तमान काल-** प्रवर्तमान क्रियाओं में यह काल होता है।

वर्तमान काल में संस्कृत तथा प्राकृत प्रत्यय (परस्मै एवं आत्मनेपदी)

विभक्ति	**एकवचन**		**बहुवचन**	
	संस्कृत	प्राकृत	संस्कृत	प्राकृत
प्रथम (अन्य) पुरुष	तिप्,त	इ, ए	झि, झ	न्ति,न्ते, इरे
मध्यम पुरुष	सिप्, थास्	सि, से	थ, ध्वम्	इत्था, ह
उत्तम पुरुष	मिप्, इट्	मि	मस्,महिङ	मो,मु,म

पढ (पठ्) धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	पढइ,पढए,पढदि, पढति,	पढन्ति, पढेन्ति
मध्यम	पढसि,पढसे,पढेसि	पढित्था,पढह,पढेह
उत्तम	पढामि, पढमि, पढेमि	पढिमो,पढिमु,पढमो,पढामो

विशेष- अकारांत धातु के अकार को वर्तमान काल के प्रत्ययों के आने पर विकल्प से 'एकार' हो जाता है,। तब पढेदि आदि रूप बनते हैं। इसके अलावा सभी लकारों, पुरुषों तथा वचनों में ज्ज,ज्जा प्रत्यय लगकर पढेज्ज,पढेज्जा ये दो रूप विशेष बनते हैं। शौरसेनी प्राकृत में पढदि अथवा पढेदि रूप प्रथम पुरुष के एक वचन में बनते हैं।

* 'पढ' धातु की तरह ही प्राय: सभी अकारांत अथवा स्वरांत धातुओं के रूप चलते है।

वर्तमान काल (हो) भू धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	होइ,होदि,भवदि,हवइ	होन्ति,होन्ते,होइरे
मध्यम	होसि,हवेसि	होहित्था,होइत्था,होह
उत्तम	होमि,	होमो,होमु,होम

* इसमें भी हो के बाद ज्ज, ज्जा अथवा ज्जइ, ज्जाइ प्रत्यय लगकर सभी कालों, पुरुषों एवं वचनों में एक जैसे चार-चार रूप और भी बन जाते हैं। यथा- होज्ज, होज्जा, होज्जइ, होज्जाइ।

* **भूतकाल**- बीते हुए काल के कथन हेतु इसका प्रयोग होता है।

१. प्राकृत भाषा में सभी स्वरान्त धातुओं में सभी पुरुष तथा वचनों में सी, ही, हीअ प्रत्यय लगकर रूप बनते हैं। यथा- होसी, होही, होहीअ।

२. महाराष्ट्री प्राकृत में व्यंजनांत सभी धातुओं के सभी पुरुषों एवं वचनों में ईअ प्रत्यय जुड़कर रूप बनते हैं।

३. भूतकाल तथा सभी कालों एवं सभी लकारों में ज्ज, ज्जा प्रत्यय लगाकर रूप प्रयोग में लाए जा सकते हैं।

* **भविष्यत्काल**- आगामी काल संबंधी वाक्य-रचना हेतु इसका प्रयोग होता है।

भविष्यत् काल संस्कृत-प्राकृत धातु प्रत्यय (प्रथम प्रकार)

पुरुष	एकवचन		बहुवचन	
	संस्कृत	प्राकृत	संस्कृत	प्राकृत
प्रथम	स्यति	स्सइ,स्सदि	ष्यन्ति	स्सन्ति
मध्यम	स्यसि	स्ससि	ष्यथ	स्सह
उत्तम	ष्यामि	स्सामि	ष्यामः	स्सामो-मु-म

भविष्यत् काल प्राकृत धातु प्रत्यय (द्वितीय प्रकार)

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	हिइ,हिए,हिदि,हिदे,हिति,हिते	हिन्ति,हिन्ते,हिइरे
मध्यम	हिसि,हिसे	हित्था,हिह
उत्तम	स्स,स्सामि,हामि,हिमि,स्सं,स्सा	हामो,हामु,होम,हिमो-मु,-म,हिस्सा,हित्था

※ अकारांत धातुओं के अंत अकार को ए होकर भी रूप बनते हैं। यथा- पढेहिए। ज्ज तथा ज्जा प्रत्यय लगकर सभी लकारों के पुरुषों एवं वचनों में रूप बनते हैं।

भविष्यत्काल पढ् (पठ्) धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	पढिस्सइ,पढिस्सदि,पढिस्सति,पढिस्सए, -दे,-ते,पढेहिइ,-दि,-ति,पढेहिए,-दे,-ते	पढिस्संति,पढिसंते,पढेस्संति,पढेस्संते, पढिहिंति,पढिहिंते,पढेहिंते,पढेहिंति
मध्यम	पढिस्ससि,पढेस्ससि,पढिस्ससे,पढिहिसि, पढेहिसि,पढिहिसे	पढिस्सह,पढेस्सह,पढिहिह,पढेहिह
उत्तम	पढिस्समि,पढिस्सामि,पढेस्समि,पढेस्सामि, पढेहिमि,पढिहामि,पढिस्स,पढिस्सं,पढिस्सा, पढेस्सा	पढिस्समो,पढिस्सामो,-मु,-म,पढेस्समो, पढेस्सामो,-मु,-म,पढिहिमो,-मु,-म, पढिहामो,-मु,-म

※ भविष्यत्काल के प्रयोगों में कुछ क्रियाओं में प्रत्यय नहीं लगाकर अथवा वर्तमान का प्रत्यय लगाकर आदेश भी होते हैं।

यथा- सोच्छ (श्रु)-सोच्छामि-सुनूंगा, रोच्छ (रुद्) रोच्छामि-रोऊंगा, वोच्छ (वद्) वोच्छामि-कहूंगा, दच्छ (दृश्) दच्छामि-देखूंगा, मोच्छ (मुच्) मोच्छामि-छोड़ूंगा, वेच्छ (विद्) वेच्छामि-जानूंगा, छेच्छ (छेद्) छेच्छामि-छेदूंगा, भेच्छ (भिद्) भेच्छामि-भेदूंगा, भोच्छ (भुज्) भोच्छामि-खाऊंगा।.. आदि.

भविष्यत्काल हो (भू) धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	होस्सइ, होहिइ	होस्संति, होहिंति, होहिंते, होहिरे
मध्यम	होस्ससि, होहिसि	होस्सह, होहित्था, होहिह
उत्तम	होस्सामि, होस्सं होहामि, होहिमि होहिमो,-मु,-म, होहिस्सा, होहित्थो	होस्सामो,-मु,-म,होहामो,-मु,-म,

* विध्यर्थक तथा आज्ञार्थक-किसी प्रकार की विधि बताना, आज्ञा देना या आशीर्वाद अर्थ में इनका प्रयोग होता है।

विधि तथा आज्ञावाची धातु प्रत्यय

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	उ,दु(शौरसेनी)	न्तु
मध्यम	लोप,सु,हि,इज्जे,इज्जहि,इज्जसु	ह
उत्तम	मु	मो

विधि एवं आज्ञा में पढ (पठ्) धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	पढउ,पढदु	पढंतु
मध्यम	पढ,पढसु,पढहि,पढेज्जे,पढेज्जहि,पढेज्जसु,	पढह
उत्तम	पढमु, पढिमु, पढामु	पढमो, पढिमो, पढामो

विधि एवं आज्ञा में हो (भू) धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	होउ, होदु	होंतु
मध्यम	होहि, होमु	होमो, होह
उत्तम	होमु	होमो

* इनके अलावा धातु एवं धातु प्रत्यय के बीच में विकल्प से ज्ज एवं ज्जा होकर होज्जउ, होज्जाउ आदि रूप बनते हैं। धातु प्रत्ययों के स्थान पर इनके आने पर होज्ज, होज्जा रूप सर्वत्र बनते हैं।

* **क्रियातिपत्ति-** क्रियातिपत्ति में सभी पुरुषों तथा सभी वचनों में ज्ज, ज्जा, न्त अथवा माण प्रत्यय लगकर पढेज्ज, पढेज्जा, पढन्तो, पढमाणो रूप बनते है।..... हो (भू) धातु में होज्ज, होज्जा, होन्तो, होमाणो रूप बनते हैं।

* **अनियमित-धातुरूप-** सभी पुरुषों एवं वचनों में एक समान रूप बनते हैं।

वर्तमानकाल अस धातु के रूप

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	अत्थि	अत्थि
मध्यम	अत्थि,सि	अत्थि
उत्तम	अत्थि,म्हि	अत्थि,म्हो,म्ह

* भूतकाल में सभी पुरुषों तथा वचनों में आसि एवं अहेसि रूप बनते हैं।

* भविष्यत् काल, विध्यर्थक तथा आज्ञार्थक के सभी पुरुषों एवं वचनों में अत्थि रूप बनता है। ये सभी रूप भू धातु को अस आदेश होकर बनते हैं।

* प्रेरणार्थक रूप- धातु से प्रेरणार्थक (णिजन्त) रूप बनाने के लिए क्रिया में प्रत्यय के पूर्व पर अ, ए, आव तथा आवे आदेश होकर पाढइ, पाढेइ, पाढावइ तथा पढावेइ रूप बनते हैं।

* **वाच्य-विचार**

सकर्मक और अकर्मक क्रियाओं के कारण वाच्य तीन प्रकार के हैं- जिनमें कर्म छुपा रहता है वह सकर्मक तथा जिनमें कर्म नहीं रहता है वे अकर्मक क्रियाएं कहलाती हैं।

१. कर्तृवाच्य-इसमें कर्ता की मुख्यता रहती है तथा उसके अनुसार ही कर्म एवं क्रिया होती है। यथा- सो गंथं पढदि (सकर्मक)। सो हसइ-वह हंसता है (अकर्मक)।

२. कर्मवाच्य-इसमें कर्म की मुख्यता रहती है तथा कर्त्ता में तृतीया होती है। यथा- तेण गंथं पढिज्जइ-उसके द्वारा ग्रंथ पढा जाता है।

३. भाववाच्य- इसमें कर्मवाच्य की तरह प्रयोग होता है किन्तु क्रिया अकर्मक रहने से ये भाव प्रधान हो जाने से यह भाववाच्य कहलाता है। यथा- तेण हसिज्जइ-उसके द्वारा हँसा जाता है।

* **रूपमाला-** कर्मवाच्य, वर्तमान काल, भूतकाल, विध्यर्थक तथा आज्ञार्थक रूप बनाने के लिए धातु प्रत्ययों के पूर्व ईअ अथवा इज्ज प्रत्यय जोड़े जाते हैं।

यथा-पढ+ईअ+इ=पढीअइ। पढ+इज्ज+इ=पढिज्जइ।

भविष्यत् काल एवं क्रियातिपत्ति में कर्तृवाच्य के समान रूप चलते हैं।

प्रेरणार्थक- कर्मवाच्य तथा भाववाच्य के प्रेरणार्थक रूप बनाने के लिए मूलधातु के अन्तिम अ को आ कर आवि प्रत्यय जोड़ देने के बाद कर्मवाच्य तथा

भाववाच्य के ईअ एवं इज्ज प्रत्यय जोड़ने से प्रेरणार्थक रूप बन जाते हैं। यथा- पढावीअइ, पढाविज्जइ, अथवा पढीअइ, पढिज्जइ आदि।

✻ सभी कृदन्तों में धातुओं के रूप बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि परस्मैपदी धातुओं में 'न्त' तथा आत्मनेपदी धातुओं में 'माण' प्रत्यय लगता है। उभयपदी में दोनों का प्रयोग होता है।

✻ **परस्मैपदी धातुएं-** पढ (पढ़ना), लिख (लिखना), वस (रहना), सक्क (समर्थ), सिज (रचना), सास (शासन), चिट्ठ (चेष्ठा), फास (स्पर्श), सय (शयन), सर (स्मरण), हर (हरण), गच्छ (जाना), आदि धातुओं के सभी कृदन्तों के सभी लिंगों में रूप बनाइये।

✻ **आत्मनेपदी धातुएं-**इच्छ (इच्छा), कंप (कांपना), कर (करना), जण (उत्पन्न होना), तिप्प (तृप्त होना), णय (लाना), मण्ण (मानना), जुज्झ (युद्ध करना), वंद (नमस्कार), वड्ढ (बढ़ना), सेव (सेवा करना), आदि धातुओं के सभी कृदन्तों में रूप बनाइए।

✻ **उभयपदी धातुएं-** कर (करना), छिंद (छेदना), भिंद (भेदना), जाण (जानना), धाव (दौड़ना), णय (लाना), पच (पकाना), लिह (लिखना), बह (ढोना), दुह (दुहना), दह (जलाना) आदि।

✻ हस (हंसना), गच्छ (जाना), अच्च (अर्चा), इक्ख- इच्छ (ईक्ष-देखना), कंप (कांपना),कोव (कुप-क्रोध करना), कस्स (कर्ष-खींचना), कंद (क्रंदन), कीण (खरीदना), लिह (लिखना), गज्ज (गर्जना), छिंद(छेदना), तज्ज (तर्ज-डांटना), तुस (संतुष्ट होना), भक्ख (खाना), मथ (मथना), सिज (रचना), जुंज (जोड़ना), बाध (पीड़ा देना).... आदि धातुओं के सभी लकारों में रूप बनाइये।

अभ्यास

प्रश्न १. पांच परस्मैपदी व पांच उभयपदी धातुएं लिखिए?

प्रश्न २. प्राकृत के धातु रूपों की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए?

प्रश्न ३. प्रेरणार्थक कर्तृवाच्य के रूप कैसे बनते हैं?

प्रश्न ४. भूतकाल में कौनसे प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है?

प्रश्न ५. वर्तमान काल में हस् धातु के रूप लिखें?

---- o ----

अध्याय-८

कृदन्त प्रकरण

धातुओं के अन्त में जोड़कर जिन प्रत्ययों द्वारा संज्ञा, विशेषण और अव्यय वाचक शब्द बनते हैं उन्हें कृत कहते हैं तथा उनके योग से बने शब्द कृदन्त कहलाते हैं।

* कृदन्तों के भेद एवं उनके प्रत्ययों का स्पष्टीकरण क्रमशः देखिए-

(१) **वर्तमान कृदन्त**- संस्कृत के शतृ, शानच् प्रत्यय को प्राकृत में न्त, माण आदेश करके धातु में जोड़ने पर वर्तमान कृदन्त के रूप बनते हैं। स्त्रीलिंग में इन प्रत्ययों में ई तथा स्वतंत्र ई जुड़कर रूप बनते हैं। कहीं-कहीं प्रत्यय के पूर्ववर्ती अ को विकल्प से ए भी हो जाता है।

१. कर्तृवाच्य वर्तमान कृदन्त-सभी पुरुषों एवं वचनों (पढ धातु) के रूप-

पुल्लिग	**नपुंसकलिंग**	**स्त्रीलिंग**
पढन्तो,पढमाणो	पढंतं,पढमाणं	पढवंती,पढमाणी,पढेंती
पढेंतो,पढेमाणो	पढेंतं,पढेमाणं	पढेमाणी,पढई,पढेई

प्रेरणार्थक- (पुल्लिंग) पाढंतो, पाढेंतो, पाढमाणो, पाढेमाणो, पढावंतो, पढावेन्तो, पढावमाणो, पढावेमाणो।

इन्हीं रूपों को अनुस्वरान्त करने से नपुंसक तथा ईकारांत करने से स्त्रीलिंग वाची प्रेरणार्थक वर्तमान कृदन्त के रूप बनते हैं।

वर्तमान कृदन्त 'हो' धातु के क्रमशः त्रिलिंगों के सभी पुरुषों एवं वचनों के रूप

पुल्लिग	**नपुंसकलिंग**	**स्त्रीलिंग**
होंतो,होमाणो	होंतं,होमाणं	होंती,होमाणी

२. कर्मवाच्य वर्तमान कृदन्त-क्रमशः तीनों लिंगों के सभी पुरुषों एवं वचनों के रूप-

पुल्लिग	**नपुंसकलिंग**	**स्त्रीलिंग**
पढीअंतो, पढीअमाणो	पढीअंतं,पढीअमाणं	पढीअंती,पढीअमाणी,पढिज्जंती
पढिज्जंतो, पढीअमाणो	पढिज्जंतं,पढिज्जमाणं	पढिज्जमाणी,पढीअई,पढिज्जई

प्रेरणार्थक- पढिअंता, पाढीअमाणो, पाढिज्जंतो, पाढिज्जमाणो, पढावीअंतो, पढावीअमाणो, पढाविज्जंतो, पढाविज्जमाणो।

इन्ही रूपों को अनुस्वारान्त करने से नपुंसक तथा ईकारांत करने से स्त्रीलिंग वाची प्रेरणार्थक वर्तमान कृदन्त के रूप बन जाते हैं।

✻ **भूतकृदन्त**- संस्कृत के क्त के स्थान पर प्राकृत में अ प्रत्यय जुड़कर भूतकृदन्त के रूप बनते हैं। यह 'अ' प्राकृत वर्ण-परिवर्तन संबंधी नियमों के अनुसार क्त के स्थान पर शेष बचता है। यथा- पढ+अ= पढिअ, इस 'अ' प्रत्यय के पूर्ववर्ती अ को इ हो जाता है।

कर्तृवाचक में क्रमशः तीनों लिंगों के सभी पुरुषों व वचनों के रूप-

पढिओ (पुं), पढिअं(नपुं), पढिई (स्त्री)

प्रेरणार्थक-पाढिओ, पढाविओ(पु.), पढाविअं,पाढिअं(नपुं.), पाढिई, पढाविई (स्त्री.); कर्मवाच्य में भी ऐसे ही रूप बनेंगे।

✻ संस्कृत-सिद्ध शब्दों से निर्मित कुछ भूतकृदन्त-

गतम्-गअं; गदं, कृतम्-कडं; मृतम्-मडं, जितम्-जिअं, पिहितम्-पिहिअं, भणितं-भणियं आदि।

संबंध सूचक भूतकृदन्त- सम्बंध सूचक भूतकृदन्तों में संस्कृत के क्त्वा तथा ल्यप् प्रत्यय के स्थान पर धातु में तु, अ, तूण, तुआणं, इत्ताणं अथवा आए प्रत्यय जोड़कर रूप बनाए जाते हैं। णकारांत प्रत्ययों पर अनुस्वार रखकर भी रूप बनते हैं। प्रत्ययों के पूर्ववर्ती 'अ' को प्रयोगानुसार इ अथवा ए आदेश हो जाते हैं। यथा-

पढ+तुं=पढितुं, पढिदुं, पढिउं, पढेउं (पठितुं=पढ़ने के लिए)।

पढ+अ=पढिअ, पढेअ (पठित्वा=पढकर)।

पढ+तूण=पढिऊण, पढिऊणं, पढेऊण, पढेऊणं (पठित्वा=पढकर)।

पढ+तूआण=पढिउआण,-णं, पढेउआण,-णं।

कर+इत्ता=करित्ता (कृत्वा-करके)।

कर+इत्ताण=करित्ताण, करित्ताणं (कृत्वा-करके)।

गह+आय=गहाय (गृहीत्वा=गृहण करके)।

आय+आए=आयाए (आदाय=ग्रहण करके)।

✲ **भविष्यत्कृदन्त-** भविष्यत्कृदन्त के रूप बनाने के लिए धातु में स्सन्त, स्समाण, स्सई प्रत्यय जोड़े जाते हैं। स्सई प्रत्यय केवल स्त्रीलिंग में ही जुड़ता है।

हस (पुल्लिंग)-हसिस्सन्तो, (हसिष्यत्-हंसता हुआ), हसिस्समाणो (हसिष्यमाणः)

नपुंसक- हसिस्संतं, हसिस्समाणं। स्त्रीलिंग- हसिस्सई (हसिष्यति) आदि।

✲ **हेत्वर्थककृदन्त-** संस्कृत 'तुम्' प्रत्यय के स्थान पर धातु में 'उं' तथा 'त्तए' प्रत्यय लगाने पर हेत्वर्थक कृदन्त के रूप बनते हैं। त्तए प्रत्यय का प्रयोग अर्धमागधी में सबसे ज्यादा होता है। प्रत्ययों के पूर्ववर्ती अ को इ अथवा ए हो जाता है -

पढ+उं=पढिउं, पढेउं (पठितुं-पढने के लिए), तुं (अर्ध.), दुं (शौरसेनी)
कर+त्तए=करित्तए, करेत्तए (कर्तुं-करने के लिए)

✲ **विध्यर्थक कृदन्त-** संस्कृत के विध्यर्थ 'यत्' प्रत्यय को प्राकृत में 'ज्ज' हो जाता है। धातु में तव्व, अणिज्ज तथा अणीअ प्रत्यय लगाने से भी हेत्वर्थक कृदन्त के रूप बनते हैं। तव्य प्रत्यय के पूर्ववर्ती अ को इ अथवा ए हो जाता है।

क+ज्जं=कज्जं (कार्य=कार्य), वज्जं (वर्ज्यम्=निषिद्ध)।

पढ+तव्व=पढिअव्वं, पढेअव्वं, पढितव्वं, पढेतव्वं (पढितव्यम्)।

पढ+अणिज्ज=पढणिज्ज, पढणिज्जं (पठनीयम्)।

पढ+अणीय=पढणीय, पढणीयं (पठनीयम्=पढ़ने योग्य)।

✲ **कर्तृसूचक कृदन्त-** धातु में इर प्रत्यय लगाने पर कर्तृसूचक कृदन्त के रूप बनते हैं।

पढ+इरो= पढिरो (पढता हुआ पुरुष), पढिरा (पढती हुई स्त्री) त्वर+इरो=तुरिरो (जल्दबाजी करता हुआ)।

कुछ अन्य प्रत्यय-म्म (विसम्म), च्च (आमुच्च), च्चा (किच्चा), त्ता (जयित्ता), त्तु (वंदित्तु) आय (उड्डाय), आत (धम्मादात), ट्टु (कट्टु)। प्रयोग देखिए-

१. सुणंदा विसम्भ गच्छीअ- सुणंदा विश्राम करके गई।

२. देवी पणमिच्चा हरिसर- देव प्रणाम करके प्रसन्न होता है।

३. उसहो धम्मादात सेट्ठं पदं पव्वीअ- ऋषभनाथ ने धर्म से श्रेष्ठ पद प्राप्त किया।

४. सिस्सो वंदित्तुं आसीसं गहणीअं- शिष्य ने वंदना करके आशीष ग्रहण किया।

५. रेहा उठ्ठाय महलं गच्छीअ- रेखा उठकर महल में गई।

६. वीरो कम्मुणा जयित्त णिव्वाणं लद्धीअ- वीर ने कर्मों को जीतकर निर्वाण प्राप्त किया।

७. अंबा दुद्धं पिबाय सुमरई- माता दूध पीकर स्मरण करती है।

❋ अन्य कृदन्तों के प्रयोग देखें-

१. वह देखता हुआ चलता है। सो पस्संतं गच्छदि। (वर्तमान)

२. वह देखता हुआ चलेगा। सो पस्सिस्सन्तो गच्छीहिइ।(भविष्यत्)

३. वह देखता हुआ चला था। सो पस्संतं गच्छीअ। (भूतकाल)

४. वह देखकर आता है।सो पस्सिदूण आगच्छदि। (सम्बंध)

५. वह पढने के लिए आता है। सो पढिंउं-दुं आगच्छदि। (हेत्वर्थ)

६. अब पढ़ना चाहिए। संपतं पढिदव्वं। (विध्यर्थक)

इसी प्रकार अन्य प्रयोग भी बनाना चाहिए।

अभ्यास

प्रश्न १. वर्तमान कृदन्त के प्रत्यय उदाहरण सहित लिखिए?

प्रश्न २. गतम्, कृतम् एवं पिहितम् का भूतकृदन्त में प्रयोग क्या होगा?

प्रश्न ३. संबन्ध सूचक और भविष्यत कृदन्त के उदाहरण दीजिए?

प्रश्न ४. हस्, पढ्, णच्च में विध्यर्थक कृदन्त लगाकर रूप बनाइए?

प्रश्न ५. हाँ/ना में उत्तर लिखिए?

(क) संस्कृत के शतृ को प्राकृत में न्त आदेशा होता है? ( )

(ख) भूदकृदंत के प्रयोग प्राय: 'अ' प्रत्यय जुड़कर बनते हैं? ( )

(ग) 'पढिदुं' यह हेत्वर्थक कृदन्त का रूप नहीं है? ( )

(घ) विध्यर्थक में 'तव्व' प्रत्यय लगता है? ( )

(ङ) 'गहणीयं' यह भविष्य कृदंत का प्रयोग है? ( )

---- o ----

अध्याय-९

तद्धित-प्रकरण

तद्धित- तद्धित का शाब्दिक अर्थ है- 'तेभ्य:' प्रयोगेभ्य: हिता: इति तद्धिता:' अर्थात् ऐसे प्रत्यय जो विभिन्न प्रयोगों के काम में आते हैं अथवा संज्ञा, सर्वनाम तथा विशेषण आदि में जिन प्रत्ययों को जोड़कर कुछ और अर्थ भी निकल आता है, उन प्रत्ययों को तद्धित कहते हैं। यथा- नाभेय-नाभि राजा के पुत्र, यहां अण् प्रत्यय लगा है।

कुछ तद्धित रूप- सामान्य प्रत्यय-

संस्कृत-प्रत्यय		प्राकृतआदेश	संस्कृत रूप	प्राकृत रूप
१.	अण्	एच्चय	यौष्माक्,अस्माकम्	तुम्हेच्चयं,अम्हेच्चयं
२.	कम्	क	चन्द्रक:,बहुकम्	चंदो,बहुअं
३.	कम्	इल्ल	पल्लव:, पल्लवक:,	पल्लवो, पल्लिवो
४.	कन्	उल्ल	पितृक:, हस्तक:	पिउल्लो-पिआ, हत्थल्लो-हत्थो,
५.	कन्	ल्लो	एकक:, नवक:	एकल्लो-एक्को, नवल्लो-नवो,
६.	कृत्वस्	हुत्त	शतकृत्व:, सहस्रकृत्व:	सयहुत्तं, सहस्सहुत्तं,
७.	ईन	इक	सर्वाङ्गीण:	सव्वङ्गिओ

भावार्थक प्रत्यय-

८.	ड्ति	इल्ल	ग्रामीणम्,पौरी	गामिल्लं,पुरिल्ला
९.	ड्ति	उल्ल	आत्मनि भवं	अप्पुल्लं
१०.	ईय	णय	आत्मीयम्	अप्पुल्लं, अप्पयं
११.	ईय	केर	युष्मदीय:,अस्मदीय:	तुम्हकेरो, अम्हकेरो
१२.	ईय	क्क	परकीयम्	पारक्कं, पारकेरं
१३.	ईय	इक्क	राजकीयम्	राइक्कं, रायकेरं
१४.	ण	इकट्	पान्थ:	पहिओ, पधिओ
१५.	तसिल्	त्तो, दो	सर्वत:,यत:	सव्वत्तो,सव्वओ,जत्तो-जदो-ओ

१६.	तैलच्	एल्ल	कटुतैलं	कडुएल्लं
१७.	त्रल	हि,ह,त्थ,	यत्र,तत्र	जहि,जह,जत्थ,तहि,तह,तत्थ
१८.	त्व	डिमा,त्तण	पीनत्वम्	पीडिमा,पीणत्तणं
१९.	दा	सि,सिअं, इआ,	एकदा	एक्कसि,एक्कसिअं,इक्कइआ, एगआ, एगदा
२०.	मतुप्	आलु	ईर्ष्यावान्,लज्जावान्	ईसालू,लज्जालू
२१.	मतुप्	इल्ल	शोभावान्,छायावान्	सोहिल्लो,छाइल्लो
२२.	मतुप्	उल्ल	विचारवान्,दर्पवान्	विआरुल्लो,अप्पुल्लो
२३.	मतुप्	आल	रसवान्,जटावान्	रसालो,जडालो
२४.	मतुप्	वन्त	धनवान्,ज्ञानवान्	धनवन्तो, णाणवन्तो
२५.	मतुप्	मन्त	हनुमान्,श्रीमान्	हणुमंतो,सिरिमंतो
२६,	मतुप्	इत्त	काव्यवान्,मानवान्	कव्वइत्तो,माणइत्तो
२७.	मतुप्	इर	गर्ववान्, रेखावान्	गव्विरो,रेहिरो
२८.	मतुप्	मण	धनवान,शोभावान्	धणमणो,सोहामणो
२९.	वति	व्व	मधुवत्,मधुरावत्	महुव्व,महुरव्व

* प्राकृत में परिणामार्थक प्रत्यय एतत् आदि को चार आदेश होकर एतत् का लोप होता है।

प्रत्यय		संस्कृत रूप	प्राकृत रूप
१.	इत्तिय	यावत्,तावत्,एतावत्	जित्तिअं,तित्तिअं,इत्तिअं
२.	एत्तिय	इयत्,किय्त्,एतावत्,	एत्तिअं,केत्तिअं,एत्तियं
३.	एत्तिल	इयत्,यावत्,एतावान्	एत्तिलं, जेत्तिलं, एत्तिलं
४.	इद्दह	इयत्,यावत्,एतावत्	एद्दहं, जेद्दहं, एद्दहं

* श्रेष्ठार्थक प्रत्यय- प्राकृत में एक से श्रेष्ठ तथा सर्वश्रेष्ठ के अर्थ में तर- (अर), तम (अम), ईयस् तथा इष्ट (इट्ठ) प्रत्ययों का प्रयोग होता है। प्रयोग देखिए-

	श्रेष्ठ	श्रेष्ठतर	श्रेष्ठतम
१	तिक्ख (तीक्ष्ण)	तिक्खअर	तिक्खअम
२.	पिअ (प्रिय)	पिअअर	पिअअम
३.	गुरु (भारी)	गरीयस	गरिट्ठ
४.	पडु (चतुर)	पडीयस, पडुअर,	पडिट्ठ, पडिट्ठअम
५.	सिक्ख (शिक्ष)	सिक्खअर	सिक्खअम
६.	मुक्ख (मुख्य)	मुक्खअर	मुक्खअम

प्रयोग- १. गर्ववान पुरुष- *गव्विरो पुरिसो*। २. अत्यंत चतुर मनुष्य- *पडिट्ठो पुरिसो*। ३. समुद्र के समान गंभीर-*समुद्दव्व गहीरा*। ४. मेरु समान श्रेष्ठ-*मेरुव्व सेट्ठो।*

अभ्यास

प्रश्न १. तद्धित किसे कहते हैं ?

प्रश्न २. कोई पांच तद्धित प्रत्यय लिखें ?

प्रश्न ३. तिव्व (तीव्र), सुंदर, लहु (लघु), दिग्घ (दीर्घ), शब्दों में श्रेष्ठार्थक प्रत्यय लगाकर शब्द बनाइए।

प्रश्न ४. परिणामार्थक प्रत्यय के कोई चार उदाहरण दीजिए ?

प्रश्न ५. पितृकः, एककः एवं शतकृत्वः में पद्धित सामान्य प्रत्यय लगाकर प्राकृत रूप बनाइये ?

प्रश्न ६. प्रत्यय पहचान कर शब्द और प्रत्यय पृथक्-पृथक् लिखिए-

पहिओ, गामिल्लं, णाणवंतो अप्पुल्लं, तुम्हकेरो, कव्वइत्तो।

प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर लिखिए ?

(क) जो प्रत्यय विभिन्न प्रयोगों के काम आते हैं, वे तद्धित कहलाते हैं? (   )

(ख) 'नाभेय' शब्द में अण् प्रत्यय जुड़ा हुआ है ? (   )

(ग) भावार्थक प्रत्यय प्राकृत में नहीं होते ? (   )

(घ) प्राकृत में 'एतत्' को छह आदेश होते हैं ? (   )

---- o ----

(३) **कर्मधारय**-तत्पुरुष के समानाधिकरण समास का दूसरा नाम कर्मधारय समास है। जिसमें दो पदों का अधिकरण (आधार) समान हो वह समानाधिकरण या कर्मधारय समास कहलाता है। इसके चार भेद हैं-

१. उपमान पूर्वपद कर्मधारय-उपमान और उपमेय का समास। यथा- चंदोव्व मुहं-चंदमुहं, कमलव्व करं=कमलकरं।

२. उपमानोत्तर पूर्वपद कर्मधारय- उपमेय और उपमान का समास। यथा-मुह चंदोव्व-मुहचंदो।

३. विशेषण पूर्वपद कर्मधारय- विशेषण और विशेष्य का समास। यथा- महंतो य वीरो सो-महावीरो।

४. विशेष्य पूर्वपद कर्मधारय- विशेष्य और विशेषण का अथवा दो विशेषों का समास। यथा- कुमारी य सा गब्भिणी-कुमारी गब्भिणी।

(४) **द्विगु समास**- कर्मधारय का प्रथम शब्द संख्यावाची हो और दूसरा संज्ञावाची तो द्विगु समास हा ता है। यथा

णवण्हं तच्चाणं समाहारो-णवतच्चं (एकवद्भावी)

तिण्णि लोया-तिलोया (अनेकवद्भावी)।

(५) **द्वन्द्व समास**- जब दो या दो से अधिक संज्ञाएं एक साथ आती हैं, तब द्वन्द्व समास होता है।

इसके तीन भेद हैं-

१. इतरेतर द्वन्द्व-इसमें दोनों संज्ञाएं अपना प्रधानत्व रखती हैं-यथा- देवा य देवीओ य- देवदेवीओ, जीवा य अजीवा य-जीवाजीवा।

२. समाहार द्वन्द्व- ऐसी संज्ञाएं जो समूह का बोध कराएं, के योग में यह होता है। यथा-तवो य संजमो य एदेसिं समाहारो-तवसंजमं।

३. एकशेष द्वन्द्व-इसमें दो या अधिक पदों में से एक पद शेष रह जाता है। यथा- मादा य पिदा य त्ति- पिदरा, जिणो य जिणो- जिणा।

(६) **बहुब्रीहि समास**- जब दो या अधिक पद समस्त होकर किसी तीसरे का विशेषण होकर रहते हैं, तब यह समास होता है। तत्पुरुष के समान इसके भी बहुत भेद हैं। बहुब्रीहि में समस्त पद किसी तीसरे शब्द का विशेषण होता है। समानाधिकरण बहुब्रीहि के उदाहरण- जिदा परिसहा जेण सो- जिदपरिसहो (महावीरो), सेदं अंबरं जेसिं ते- सेदंबरा (श्वेताम्बर); णीलं अंबरं जेसिं ते- णीलंबरा।

व्यधिकरण बहुब्रीहि के भेद व उदाहरण-

१. द्विपद- चक्कं पाणिम्मि जस्स सो- चक्कपाणी (नारायण)

चक्कं हत्थे जस्स सो- चक्कहत्थो (चक्रवर्ती)

२. बहुपद- धुदो सव्व किलेसो जस्स सो- धुदसव्वकिलेसा (सिद्ध)

३. सहपूर्वपद- सीसेण सह- ससीसो (गुरू), लक्खमेण सह-सलक्खमणो (रामो), किण्हेण सह-सबलभद्दो (बलदेवो), बालेण सह-सबालो (पिता)

४. संख्योत्तर पद- पंच वत्ताणि जस्स सो-पंचावत्तो (सीहो), चत्तारि मुहाणि जस्स सो-चउम्मुहो (ब्रह्मा), एगदंतो जस्स सो एगदंतो (गणेश)।

५. विशेषण पूर्वपद- णीलो कंठा जस्स सो-णीलकंठो (मोरो)।

महंता बाहूणो जस्स सो-महाबाहू (इंदो)।

६. उपमान पूर्वपद- चंदोव्व मुहं जाए-चंदमुही (कण्णा)।

७. नञ बहुब्रीहि- ण अत्थि णाहो जस्स सो-अणाहो।

८. प्रादि बहुब्रीहि-इसमें 'प्र' आदि उपसर्गों के बाद आए हुए पदों के साथ किसी अन्य पद का समास होता है। यथा-

प - पकट्ठं पुण्णं जस्स सो - पपुण्णो (जणो)।

णि - णिग्गया लज्जा जस्स सो - णीलज्जो।

वि - विगदो धवो जाए सा - विधवा।

अव - अवगदं रूवं जस्स सो - अवरूवो।

अइ - अइक्कंतो मग्गो जेण सो - अइमग्गो रहो।

परि - परिगदं जलं जाए सा - परिहा।

✲ समास तोड़िए- उवगंगं, सचक्कं, अणुभावं, अणासवा, णीसासो (अव्ययीभाव), जिणमंदिरं, धम्मपुत्तो, हंसवाहिणी, कल्लाणपत्तो, चक्खुकाणा, (तत्पुरुष), लाहालाहा, सारासारं, सुहदुक्खं (द्वन्द्व), सपुत्तो, सकम्मो, जिदिंदिओ, पत्तणाणो (बहुब्रीहि)।

अभ्यास

प्रश्न १. अव्ययी भाव और तत्पुरुष समास में अन्तर क्या है?

प्रश्न २. समास की परिभाषा एवं मुख्य भेद लिखें?

प्रश्न ३. कर्मधारय समास किसे कहते हैं?

प्रश्न ४. समास विग्रह कीजिए- मुहचंदो, सत्ततच्चं, तिण्णि रयणा, जीवाजीवा?

प्रश्न ५. बहुब्रीहि समास की परिभाषा उदाहरण सहित प्रस्तुत कीजिए?

---- o ----

अध्याय-११

अव्यय-प्रकरण

सरिच्छं तीसु लिंगेसु, सव्वेसिं च विहत्तिसु।
वयणेसु च सव्वेसिं, जं ण वेत्ति तं अव्वयं॥

अव्यय- जो अपरिवर्तित शब्द होते हैं अर्थात् जिन शब्दों में लिंगभेद, विभक्तिभेद, वचनभेद तथा कालभेद आदि नहीं होता है, वे अव्यय कहलाते हैं। अव्ययों को क्रिया-विशेषण भी कहते हैं।

क्रं.	**अव्यय**	**अर्थ**	**वाक्य प्रयोग**
१.	अइ (अयि),हे	अयि(संबोधन)	अयि! मित्र-हे मित्र
२.	इ, णाम, ओ	पादपूरक	जह णाम कोवि-जैसे कोई
३.	अंतो-अंतो	भीतर-भीतर	अंतो-अंतो डज्झामि- भीतर-भीतर जलता हूँ
४.	अग्गदो, अग्गे	आगे	गुरु अग्गदो गच्छति- गुरु आगे जाते हैं
५.	अचिरं, अचरित्तो	शीघ्रं	सो अचिरं पढेदि- वह शीघ्र पढता है
६.	अतो, अदो	इसलिए	अतो गच्छेज्ज- इसलिए जाओ
७.	अदि,अईव	बहुत,अधिक	अदि तिव्वो-अति तीव्र
८.	अह, अथ	अनंतर	अह सो गदो-अनंतर वह गया
९.	अत्थ	यहां	सो अत्थ वसदि-वह यहां रहता है
१०.	अज्ज	आज	अहं अज्ज सयामि-मैं आज सोता हूँ
११.	अलं,पज्जत्तं	पर्याप्त	अलं वित्थरेण-अब मत फैलाओ
१२.	अवि, अपि	भी	अज्जवि-आज भी
१३.	अहुणा	अब	अहुणा किं करेसि-अब क्या करते हो
१४.	अंतरेण,विणा	बिना	णाणं अंतरेण मुक्खो- ज्ञान के बिना मूर्ख
१५.	अंतरा	बीच में	सो अंतरा पडदि-वह बीच में गिरता है
१६.	अण्णच्च	और भी	गुरु अण्णच्च चिंतेदि-गुरु और भी सोचते हैं

१७.	अण्णत्थ	अन्यत्र	अण्णत्थ गच्छदि-अन्यत्र जाता है
१८.	अभिदो	चारों ओर	साहुंए अभिदो- साधु के चारों ओर
१९.	इच्चेवं,एवं	इस प्रकार	एवं भणेदि- ऐसा कहता है
२०.	इत्थं,इदि	इस प्रकार	इत्थं विचिंतदि- ऐसा सोचता है
२१.	ईसिं, किंचि	कुछ,किंचित्	ईसिं जाणेदि- किंचित जानता है
२२.	इदाणिं	इस समय	इदाणिं गच्छेज्ज- इस समय जाओ,
२३.	उ,दु,तु,किण्णु	किंतु	पच्छा दुं- किन्तु बाद में
२४.	उच्चं,ऊचं	उच्च	उच्चं सुणेदि- ऊँचा सुनता है
२५.	उभयदो	दोनों तरफ	णयरं उभयदो णदी- नगर के दोनों तरफ नदी
२६.	एगत्थ	एक जगह	एगत्थ तिट्ठेज्ज- एक जगह बैठो
२७.	एगगो,एगागी	एकाकी	अहं एगागो- मैं अकेला हूँ
२८.	एगदा, एगआ	एक बार	एगदा भुंजदि- एक बार खाता है
२९.	एत्थ,अत्थ	यहाँ	एत्थ भणेज्ज-यहाँ बोलो
३०.	एव, खु,हु	ही	(निश्चय वाची) अज्जहि- आज ही
३१.	कंचण, किंचि	कुछ	कंचण अत्थि- कुछ है
३२.	कंचि,किं	क्या	कंचि सो पढदि- क्या वह पढ़ता है
३३.	कहं, कधं	कैसे	कधं चरे- कैसे चलें
३४.	कुदो/कुतो	कहां से	सो कुदो गदो- वह कहां से गया
३५.	कदा/कया	कब	तुमं कदा गच्छसि- तुम कब जाते हो
३६.	कदाचि	कभी	कदाचि चिंतामि-कभी सोचता हूँ
३७.	केवलं,मेत्तं	केवल	अहं केवलं झामि-मैं केवल ध्यान करता हूँ
३८.	खु,खलु,णूणं	निश्चय ही	ईसरं खलु अत्थि-ईश्वर निश्चित ही है
३९.	जदि,जइ	यदि	जदि गच्छेज्ज-यदि गया
४०.	जह, जहा	जैसे	जहा अंतो तहा बहिं-जैसे भीतर, वैसा बाहर
४१.	झटिति,झत्ति	शीघ्रं	सो झत्तिं भुंजदि-वह जल्दी खाता है

४२.	तदो,ततो,तओ	तब	तओ धावदि-तब/तदनंतर दौड़ता है
४३.	तत्थ	वहां	तत्थ गमिहिमि-वहां जाऊँगा
४४.	तहा-तहेव	वैसे ही,तथा	तहेव जाणेज्ज-उसी प्रकार जानो
४५.	ण, णो, णवि	नहीं	णो चिट्ठेज्ज-मत बैठो
४६.	णालं	अपर्याप्त	णालं भोयणं-भोजन अपर्याप्त है
४७.	अलं,अलाहि	पर्याप्त	अलं हि- बस पर्याप्त है
४८.	णं, तु	क्योंकि,चूँकि	णं इणं विसेसं- क्योंकि यह विशेष है
४९.	णणु	कृपया	णणु!सुणेज्ज- कृपया सुनें
५०.	णाम	नाम,नामक	महावीरो णाम- महावीर नामक
५१.	णिगसा	पास	णदिं णिगसा- नदी के पास
५२.	पच्छा	पश्चात्	तं पच्छा- उसके बाद
५३.	पुण, पुणो	पुन:, फिर	पुणो लिहेज्ज- फिर लिखो
५४.	पुरा	प्राची	पुरा संपदा- प्राचीन संपत्ति
५५.	पुह,पुध	पृथक	पुह वसदि- पृथक रहता है
५६.	पइदिणं	प्रतिदिन	पइदिण भणेज्जा- प्रतिदिन पढ़ो
५७.	पच्चुय	उल्टा	पच्चुय भासेदि- उल्टा लगता है
५८.	पाग	पहले	पाग भणेज्ज- पहले बोलो
५९.	पातो	प्रात:	पातो उठेज्ज- प्रात: उठो
६०.	पायो	प्राय:	पायो सिज्झदि- प्राय: सिद्ध होता है
६१.	भूयो,मुहु	बार-बार	भूयो भज-बार- बार भजो
६२.	मुसा	झूठ	मुसा वदइ- झूठ बोलता है
६३.	सदा,सइ	सदा हमेशा	सदा चिंतेदि- सदा चिंतित रहता है
६४.	सणियं-सणियं	धीरे-धीरे	सणियं सणियं बुच्चदि- धीरे-धीरे बोलता है
६५.	सव्वदा	सर्वदा, हमेशा	सव्वदा मा भुंज- हमेशा मत खाओ
६६.	सद्धिं,सह	साथ	सद्धि चिट्ठ- साथ बैठो

६७.	सम्मं	भलीभांति	सम्मं णमामि- भलीभांति नमन करता हूँ
६८.	सव्वत्थ	सर्वत्र	सव्वत्थ सुहं णत्थि-सभी जगह सुख नहीं है
६९.	सयं,अप्पणो	स्वयं	सयं सिज्झेदि-स्वयं सिद्ध होता है
७०.	अम्मो, अव्वो	आश्चर्य	अम्मो! संसारस्स-संसार का आश्चर्य
७१.	आम,ओम	स्वीकृति	आम! झामि-हाँ ध्याता हूँ
७२.	णवर,णवरि	केवल	णवरि विसेसं-इतना अंतर है
७३.	चिय, चेअ, च्च	अवधारण	सो चिय-वह ही
७४.	जाहे	जिस समय	जाहे सयेज्ज-जिस समय सोते हो
७५.	ताहे	उस समय	ताहे सयेज्ज-उस समय सोओ
७६.	पाडिक्क,पडिएक्कं	प्रत्येक	पडिएक्क जणा-प्रत्येक मनुष्य
७७.	हुं	हुंकार	हुं ! सुण-हुं! सुनो
७८.	हद्धि	हा धिक्	हद्धि! तुमं-तुम्हे धिक्कार है
७९.	हन्दि, हंद	विषाद,खेद	हन्दि ! सयीअ-खेद है कि सोया
८०.	तदनंतरं	तं णंतरं	तं णंतरं गदं- उसके बाद गया

अभ्यास

प्रश्न १. अव्यय की परिभाषा गाथा सहित लिखिए ?

प्रश्न २. कोई दस अव्यय अर्थ सहित लिखें ?

प्रश्न ३. निम्नलिखित अव्ययों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए-

सव्वत्थ, अम्मो, हद्धि, पच्छा, णालं, कदा, कधं, एगत्थ, मुसा, पातो, तं णंतरं, अयि।

प्रश्न ४. आगे, पर्याप्त, बीच में, एकबार शब्दों के प्राकृत अव्यय लिखिए ?

प्रश्न ५. आश्चर्य, हर्ष एवं विषाद भावों को प्रकट करने के लिए कौन से अव्यय प्रयुक्त होते हैं ?

---- o ----

अध्याय-१२

लिंग-विचार

प्राकृत में सभी संज्ञाएं स्त्रीलिंग, पुल्लिंग तथा नपुंसकलिंग में विभाजित की गई हैं। प्राकृत में लिंग व्यवस्था की कुछ विशेषताएं संस्कृत से भिन्न हैं। यथा-

१. प्रावृष्, शरद् तथा तरणि शब्दों का प्रयोग पुल्लिंग में होता है।
प्रावृट् (स्त्री.)=पाउसो (पु.), शरद् (स्त्री.)=सरदो (पु.), तरणिः (स्त्री.)=तरणी (पु.)।

२. दामन्, शिरस् तथा नभस् शब्दों को छोड़कर शेष सकारान्त एवं नकारान्त शब्दों का प्रयोग प्रायः पुल्लिंग में होता है। यथा-

यशस् (नपुं.)=जसो (पु.), पयस् (नपुं.)=पयो (पु.),
नर्मं (नपुं.)= णम्मो (पु.), जन्मं (नपुं.)=जम्मो (पु.),

३. अक्षिवाचक तथा वचन आदि शब्दों का प्रयोग विकल्प से पुल्लिंग में होता है। यथा-

अक्षिणी (नपुं.)=अच्छी (पु.), अच्छीणिं (नपुं.), अच्छी (स्त्री)
चक्षुषी (नपुं.)=चक्खु (पु.), चक्खुणिं-चक्खूइ (नपुं.),
नयने (नपुं.)=णयणा (पु.), णयणाणिं-णि-इ-इं (नपुं.),
लोचने (नपुं.)=लोयणा (पु.), लोयणाइं-णिं-इ-इं (नपुं.),
वचनानि (नपुं.)=वयणा (पु.), वयणाइं-णिं-इ (नपुं.),
कुलम् (नपुं.)=कुलो (पु.), कुलं (नपुं.),
माहात्म्यम् (नपुं.)=माहप्पो (पु.), माहप्पं (नपुं.),
दुःखानि (नपुं.)=दुक्खा (पु.), दुक्खाणिं-णि, इ-इं (नपुं.),
भाजनानि (नपुं.)=भायणा (पु.), भायणाणि (नपुं.)।..आदि

४. पृष्ठ, अक्षि तथा प्रश्न शब्दों का प्रयोग विकल्प से स्त्रीलिंग में होता है। यथा-

पृष्ठम् (नपुं.)=पुट्ठी (स्त्री.), पुट्ठं (नपुं.),
अक्षि (नपुं.)=अच्छी (स्त्री.), अच्छिं (नपुं.),
प्रश्नः (पु.)=पण्हा (स्त्री.), पण्हो (पुं.)।

५. गुण आदि शब्दों का प्रयोग विकल्प से नपुंसकलिंग में होता है। यथा- गुणाः

(पु.)=गुणाणि-इं (नपुं.), गुणा (पु.)

देवाः(पु.)=देवाणिं-इं (नपुं.), देवा (पु.)

बिन्दवः (पु.)=विन्दुणिं-इं,-णि,-इं (नपुं.), बिन्दुणो (पु.)

खड्गः (पु.)=खग्गं (नपुं.), खग्गो (पु.)

मण्डलाग्रः (पु.)=मण्डलग्गं (नपुं.), मण्डलग्गो (पु.)

कररूहः (पु.)=कररूहं (नपुं.), कररूहो (पु.)

वृक्षा (पु.)=रुक्खाणि (नपुं.), रुक्खा (पु.)...आदि।

६. इमान्त तथा अंजलि आदि शब्दों का प्रयोग विकल्प से स्त्रीलिंग में होता है। यथा-

इमान्त शब्द- गरिमा (पु.)=एसा गरिमा (स्त्री.), एस गरिमा (पु.)

महिमा (पु.)=एसा महिमा (स्त्री.), एस गरिमा (पु.)। आदि.

अंजलि आदि शब्द-

अंजलिः (पु.)=एसा अंजली (स्त्री.), एस अंजली (पु.)

ग्रन्थिः (पु.)=एसा गंठी (स्त्री.), एस गंठी (पु.)। आदि,

७. स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होने पर बाहु शब्द के उकार को आकारादेश हो जाता है। यथा- बाहुः (पु.)=एसा बाहा (स्त्री), एसो बाहू (पु.)।

८. इनके अलावा और भी अनेक शब्द ऐसे हैं जिनके रूप पुल्लिंग और नपुंसक में विकल्प से बनते हैं। प्रकरण के अनुसार भी कहीं-कहीं शब्दों में लिंग परिवर्तन देखा जाता है।

स्त्री प्रत्यय-

जो पुल्लिंग या नपुंसक शब्दों में जुड़कर शब्द को स्त्रीवाची बना देते हैं वे स्त्री प्रत्यय कहलाते हैं। प्राकृत में स्त्री प्रत्यय आ, ई, ऊ ये तीन हैं।

१. आ प्रत्यय- अकारान्त शब्दों को स्त्रीलिंग बनाने के लिए इसका प्रयोग होता है। यथा-वच्छ+आ=वच्छा (वत्सा), पढम+आ=पढमा (प्रथमा), विगुण+आ=विगुणा (द्विगुणा), अज+आ=अजा (अजा) आदि।

२. ई प्रत्यय- संस्कृत नकारान्त शब्दों को स्त्रीलिंग बनाने हेतु यह प्रत्यय लगाया जाता है। यथा- राया+ई=राणी (राज्ञी), हत्थि (हस्तिन्)+ई=हत्थिणी (हस्तिनी), देव+ई = देवी, मणुस+ई = मणुसी... आदि।

❊ जाति अर्थ में जातिवाचक अकारांत शब्दों को स्त्रीलिंग बनाने के लिए

ई प्रत्यय का प्रयोग- हरिंण+ई=हरिणी, सीह+ई=सीही (सिंही) आदि

✻ अजातिवाचक पुल्लिंग शब्दों से स्त्रीलिंग बनाने के लिए विकल्प से ई का प्रयोग- नील+ई=नीली, नीला (नीली), हसमाण+ई,=हसमाणी, हसमाणा (हसमान), आदि।

✻ छाया तथा हरिद्रा शब्दों में स्त्रीलिंग की विवक्षा में विकल्प से ई प्रत्यय का प्रयोग-छाया+ई, आ=छाही, छाया, हलिद्दी+ई, आ=हलिद्दी, हलिद्दा (हरींद्रा) आदि।

✻ सु, अम्, आम को छोड़कर अन्य सुप परे रहते किम्, यद्, तद् शब्दों के स्त्रीलिंग की विवक्षा में विकल्प से ई प्रत्यय होता है। यथा- कीओ, काओ; जीओ, जाओ; तीओ, ताओ; इत्यादि।

३. ऊ प्रत्यय- आर्य शब्द से स्त्रीलिंग की विवक्षा में कहीं-कहीं इसका प्रयोग होता है। यथा- अज्ज+ऊ=अज्जू (आर्या)।

अभ्यास

प्रश्न १. तीनों लिगों के पांच-पांच शब्द लिखिए?

प्रश्न २. स्त्री प्रत्यय किसे कहते हैं?

प्रश्न ३. प्रावृष्, दामन, खड्ग, अंजलि शब्दों का किस लिंग में प्रयोग होता है?

प्रश्न ४. वच्छ, राया, नील, किम्, तद् शब्दों में प्रत्यय जोड़कर शब्द बनाइए।

प्रश्न ५. 'आ' स्त्री प्रत्यय के कोई तीन प्रयोग लिखिए?

प्रश्न ६. निम्न लिखित शब्दों के लिंग पहचानिए-

शरदो, जसो, दुक्खा, अच्छी, कररूहो, गंठी, छाही, पुट्ठं, तीओ, अज्जू, अजा, णाणं, जम्मं, रुक्खो, कुलं, गरिमा।

प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर लिखिए?

(क) शौरसेनी प्राकृत में चार लिंग होते हैं? ( )

(ख) 'महावीर' शब्द पुल्लिंग नहीं है? ( )

(ग) नयन शब्द तीनों लिंगों में चलता है? ( )

(घ) नकारांत शब्दों में 'ई' प्रत्यय नहीं लगता? ( )

(ङ) अकारांत में 'अ' प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग के शब्द बनते हैं? ( )

---- ० ----

अध्याय-१३

विशेषण-विचार

विशेषण- जो संज्ञा, सर्वनाम अथवा क्रिया की विशेषता व्यक्त करते हैं, वे विशेषण कहलाते हैं। संज्ञादि के लिंग, विभक्ति एवं वचनानुसार ही विशेषण का प्रयोग किया जाता है।

विशेषण के मूलत: चार भेद है- १. संख्यावाचक, २. परिमाण वाचक, ३. गुणवाचक, तथा ४. तुलनात्मक।

(१) संख्यावाचक- इससे विशेष्य की संख्या का बोध होता है। इसके दो भेद हैं- १. निश्चय संख्यावाचक, २. अनिश्चय संख्यावाचक।

१. निश्चय संख्यावाचक- जिनसे निश्चित संख्या का बोध हो ऐसे विशेषण। इसके पांच भेद हैं-

(क) गणनावाचक- एगो सीलो-एक शील, दुवे पुत्ता-दो पुत्र, ति-रयणं-तीन रतन, चउगदी-चार गतियां, पंच अत्थिकाओ-पांच अस्तिकाय, छद्दव्वाणि-छह द्रव्य, सत्ततच्चा-सप्ततत्त्व, अट्ठगुणा- आठ गुणा, णवपयत्था-नव पदार्थ, दहधम्मो-दशधर्म आदि।

(ख) क्रमवाचक-पढमा सिक्खा-प्रथम शिक्षा, वीआ कक्खा-दूसरी कक्षा, तइया विहत्ति-तृतीयाविभक्ति, चउत्थी सेणी-चतुर्थ श्रेणी, पंचमी गदी-पंचममति, आदि।

(ग) आवृत्ति वाचक- तवसा दुगुणं झाणेण लाहो अत्थि-तप से दो गुना ध्यान में लाभ है। दुद्धे दही दह गुणं सेट्ठं- दूध से दही दश गुणा श्रेष्ठ है।

(घ) समुदाय वाचक- तिण्णि बाला-तीन बालिकाए, पंच मासा-पांच महिना।

(ङ) विभाग वाचक- अस्स संघस्स तिण्णि समणा अइ पण्णो अत्थि- इस संघ के तीन श्रमण अति-प्रज्ञ है।

२. अनिश्चय संख्यावाची- ऐसे विशेषण जिससे किसी संख्या का बोध न हो। यथा- अप्प सिलोगं- थोड़े श्लोक, किंचण दिणं-कुछ दिन, किंचि समणा-कुछ श्रमण, केई भासंति-कोई कहते हैं, जीवाणं उवयारं-जीवों का उपकार, बहुविह कम्मं- बहुत प्रकार का कर्म, अणेक जणा- बहुत लोग, कइवया गेही वयाणं पालेंति- कतिपय गृहस्थ व्रतों का पालन करते हैं, आदि।

(२). परिमाण वाचक- जिनसे माप-तोल, प्रमाण आदि का बोध हो ऐसे विशेषण। इसके चार भेद हैं-

(क) तोल वाचक-छट्ठंको मिट्ठण्णं- छटांक मिठाई, दुवे किलो साली- दो किलो चावल, दसग्गाम सुवण्णं- दश ग्राम सोना, आदि।

(ख) मापवाचक- एगं आढगं दुद्धं- एक आढक दूध, दुवे चुलुगं जलं- दो चुल्लु पानी, तिण्णि हत्थपमाणं वत्थं- तीन हाथ प्रमाण वस्त्र, चऊ दंड पमाणं गिहं-चार धनुष प्रमाण घर आदि।

(ग) मूल्यवाचक- पंचवीस पण्णो- पच्चीस पैसे, पंच दिण्णारो- पांच दीनार, सत्त वराडिगा- सात कौड़ी, विंस रुप्पगो-वीस रुपया, मालाए मुल्लं पण्णारह रुप्पगो अत्थि- माला का मूल्य पंद्रह रुपए है. अण्णाए कोवि, मुल्लो णत्थि-आने का कोई मूल्य नहीं है, चउण्णी विगुणी अट्ठणगा-चउन्नी से दुगुनी अठन्नी। आदि।

(घ) समय वाचक- एगो कला-एक कला, पलं संजादं- पल बीत गया, पहरो गदो- प्रहर गया, अहोरत्तो-रातदिन, पक्खो हवेज्जा बरिसा जाएज्जा- एक पक्ष बीत गया बर्षा नहीं हुई, खणं चिंतेज्ज-क्षणभर सोचो, आदि।

(३) गुणवाचक- जिनसे किसी के गुण दोषों का बोध कराया जावे वे विशेषण। इसके भेद एवं उदाहरण-

(क) गुणवाचक- उत्तमो पुरिसो- उत्तम पुरुष, सुसीला कण्णा- सुशील कन्या, सोहणं चित्तं-शोभन चित्र, सुही बुड्ढी- सुखी बुढिया।

(ख) दोष वाचक-कुरूवो पुरिसो- कुरूप पुरुष, दुट्ठा इत्थी-दुष्ट स्त्री, णिद्धणो सज्जणो-निर्धन सज्जन, दुही बालिगा-दुःखी बालिका। आदि

(ग) रंग वाचक- सेदं तंडुलं-श्वेत तंदुल, पीदं वत्थं-पीला कपड़ा, णीलो आगासो-नीला आकाश, पउमं रत्तं-लाल कमल, हरिदं कारबेलं-हरा करेला, किण्हं केसं-काला बाल, आदि।

(घ) कालवाची- अस्सिं काले वुट्टी णत्थि- इस काल में वर्षा नहीं है, अज्ज असंति अत्थि-आज अशांति है, पुरम्मि कालम्मि तित्थयरा संजादा-प्राचीनकाल में तीर्थंकर हुए, एगं वरिसं-एक वर्ष, आदि।

(ङ) देश वाचक- अज्जखंडे भारहदेशे-आर्य खंढ के भारत देश में, यूरोवे महादीवे अमेरिगा अत्थि=यूरोप महाद्वीप में अमेरिका है, णयरम्मि धम्मप्पजणा अत्थि-नगर में धर्मात्मा मनुष्य हैं।

(च) दिशा वाचक- दक्खिणदिसाए जमो वासो अत्थि-दक्षिण दिशा में यम का वास है, पुव्वदिसाए आइच्चो- पूर्व दिशा में सूर्य, उत्तरभायम्मि मेहा गज्जंति-उत्तर भाग में मेघ गर्जते हैं, आदि।

(छ) आकारवाचक-विडालागारोमुहो-बिलाव के आकार का मुख, वित्थिण्ण वंसत्थलो- विस्तृत वंश-स्थल, बाहुबलीए वच्छत्थलो वित्थिण्णो अत्थि-बाहुबली का वक्षस्थल विस्तृत है।

(ज) दशा वाचक- सो अइकिसो अत्थि- वह अत्यंत कृश् है, अहं णिरोगी-

मैं निरोगी हूँ।

(झ) स्थान वाचक- उच्चट्ठाणे चिट्ठ- उच्च स्थान पर बैठो, अब्भिंतर आएज्ज- भीतर आओ, समणा फलगे चिट्ठन्ति-श्रमण फलक पर बैठते हैं, सिलाखंडे वड्ढमाणो अत्थि- शिलाखंड पर वर्द्धमान हैं, आदि।

(४). तुलनात्मक- व्यक्ति अथवा वस्तुओं की पारस्परिक तुलना में इसका प्रयोग होता है। यथा-

सो महत्तरो अत्थि- वह महत्तर है, इणं सेट्ठतरो-यह श्रेष्ठतर है, गजिंदो अस्सादो थूलतमो अत्थि- गजेन्द्र घोड़े से स्थूलतम है।

* तुलनात्मक अवस्थाएं -

१. मूल-अवस्था- देवो लहू अत्थि-देव छोटा है।

२. उत्तर-अवस्था- राजा चक्कवट्टीए लहू अत्थि-राजा चक्रवर्ती से छोटा है।

३. उत्तम-अवस्था- सिद्धो सेट्ठतमो अत्थि-सिद्ध श्रेष्ठतम हैं।

कुछ अवस्थाओं के रूप-

सेट्ठो-श्रेष्ठ	सेट्ठयरो-श्रेष्ठतर	सेट्ठतमो-श्रेष्ठतम
पडु-पटु	पडुयरो-पटुतर	पडुतमो-पटुतम/पडिट्ठो
लहू-लघु	लहुतरो-लघुतर	लहुतमो-लघुतम
बहू-बहुत	बहुतरो/भूयसो-बहुलतर	बहुतमो/भूयट्ठो-बहुतायत
साहू-अच्छा	साहुतरो-बहुत अच्छा	साहुतमो-सर्वोत्तम
कुसलो-कुशल	कुसलतरो-कुशलतर	कुसलतमो-अतिकुशल
थूलो-स्थूल	थूलतरो-स्थूलतर	थूलतमो-अति स्थूल
सुक्को-शुक्ल	सुक्कतरो-शुक्लतर	सुक्कतमो- अत्यंत शुक्ल

अभ्यास

प्रश्न १. नीलं (नील), अरिहा (योग्य), इट्ठो (इष्ठ), अंधो (अंधा), संपण्णो (संपन्न), मुक्खो (मूर्ख), जेट्ठो (ज्येष्ठ), इन विशेषण शब्दों का वाक्यों में प्रयोग कीजिए ?

प्रश्न २. बुड्ढो, धीरो,विज्जाणो शब्दों की तीनों अवस्थाएं लिखो ?

प्रश्न ३. तुलनात्मक विशेषण के तीन उदाहरण लिखिए ?

प्रश्न ४. विशेषण की परिभाषा देते हुए उनके प्रमुख भेदों को प्रस्तुत कीजिए ?

प्रश्न ५. चउग्गदी, पढमा सिक्खा, अहोरत्तो, पुव्व दिसाए, सेट्ठतमो, सुक्कतरो, कुसलो, में कौन से विशेषण हैं ?

---- o ----

अध्याय-१४

पर्यायवाची-शब्द

	पज्जयवाई सद्दा	पर्यायवाची शब्द
१.	अंगो (अंग:)	सरीरो, देहो, भागो, अवयवो, अंसो
२.	अग्गी (अग्नि:)	पावगो, वण्ही, जाला, सिही, किसाणू
३.	अक्खी (अक्षि:)	चक्खू, णयणो, णेत्तो, दिट्ठी, लोयणं
४.	असुरो (असुर:)	दाणवो, दइच्चो, णिसायरो रक्खसो
५.	अंधयारो (अंधकार:)	तमो, तिमिरो, तमिस्सो
६.	अप्पा (आत्मा)	आदा,णाणं, जीवो, चेयणा, अत्ता, चेदा, णादा
७.	आगासो (आकाश)	गगणं, अंबरं, अंतरिक्खं, खं, आयासो, णहो
८.	आगमं (आगमं)	पवयणं, जिणवाणी, परूवणा, सत्थं, गंथं,
९.	इच्छा (इच्छा)	इक्खा, अहिलासा, बंधा, कंखा, मणोरह
१०.	इंदो (इन्द्र:)	सक्को, पुरंदरो, सुरवइ, सुरिंदो, देविंदो, महवा
११.	इत्थी (स्त्री)	णारी, महिला, अबला, कामणी, ललणा, योसा
१२.	कमलं (कमल)	पंकजं, पउमं, अरविंदं, उप्पलो, णीरजं, राजीवं, सरोजं, इंदीवरं, पुंडरीगो, जलजं, पोम्मं
१३.	किरणो (किरण:)	मयूहो, मरीई, कर, पहा, कंती, जोदि,धामं
१४.	कोयल (कोयल)	कोइल, पिग, कुहुगिणी, वणप्पिया, सारिगा
१५.	गणेसो (गणेश:)	गणहरो, गणवदी, गणणायगो, विणायगो,
१६.	गंगा (गंगा)	भागीरही, मंदागिणी, तिपहगा, देवणई
१७.	गिहं (गृह)	आवासं, भवणं, आलयं, धामं, कुंजं, घरं,
१८.	चंदो (चंद्र:)	इंदू, सुधायरो, ससी, ससंको, हिमंसु,
१९.	जलं (पानी)	णीरं, उदगं, तोयं, अंबूं, अमियं, वारी, खीरं,
२०.	णदी (नदी)	जलवाहिणी, सरिदा, तडिणी, णीरधरी
२१.	धणू (धनुष)	कोदंडं, सरासणं, चावं, दंडं, गंडीवं, धणुहो
२२.	पवणं (पवन)	समीरं, वाऊ, अणिलो, वायू, बयारो
२३.	भज्जा (भार्या)	वामा,सहधम्मिणी, अद्धंगिणी, पिया, कंता
२४.	पव्वयो (पर्वत:)	गिरी, धरणीहरो, महीधरो, भूधरो, अवनिहरो, सेलो

२५. पक्खी (पक्षी)	खेयरो, णहयरो, विहंगमं, खगं
२६. पुप्फं (पुष्पं)	सुमणं, फुल्लं, कुसुमं, पसूणं
२७. पुत्तो (पुत्रः)	सुदो, तणयो, अप्पजो, कुमारो, तनुज
२८. पुत्ती (पुत्री)	सुदा, तणया, अप्पजा, कुमारी, कण्णा, दुहिदा
२९. मादा (माता)	जणणी, अम्मा, पसूइणी, मायु, आई, मादु
३०. मेहो (मेघः)	जलहरो, पयोहरं, जलदं, पयोदं, नीरद, वारिद
३१. रुक्खो (वृक्षः)	विडवो, तरु, महीरूह, साही, द्रुम, भूरुह
३२. समूहो (समूहः)	ओहो, गुणं, पुंज, वियाणं, संघादं
३३. समुद्दो (समुद्रः)	सिंधू, जलही, पयोही, सागरो, णीरही, रयणायरो
३४. सत्तू (शत्रुः)	अरि, रिऊ, विवक्खी, अरादि, बइरी
३५. सुज्जो (सूर्यः)	दिणयरो, रवी, भाणू, आइच्चो, मत्तंडो, दिणेसो
३६. सीहो (सिंह)	केसरी, हरी, मिगवदी, मिगराय, णगिंद, पंचाणणो
३७. हत्थो (हस्तः)	करो, पाणी, पल्लवो
३८. अस्सो (अश्वः)	तुरंगो, आजी, घोडगो
३९. हत्थी (हस्ति)	कुंजरो, करी, गयो, णागो, वारणो, मातंगो
४०. पुढवी (पृथवी)	भूमी, भू, पुहवी, खिदी, इला, उव्वी, मेदिणी, मही

* इन शब्दों की तरह ही स्वर तथा व्यंजनों को प्राकृत-व्याकरणानुसार बदलकर संस्कृत के अन्य पर्यायवाची शब्दों का भी निर्माण किया जा सकता है। अनेकार्थी शब्दों का निर्माण भी संस्कृत से प्राकृत बनाकर किया जा सकता है।

अभ्यास

प्रश्न १. अग्गी, अप्पा, इच्छा और धणु के पर्यायवाची लिखें ?

प्रश्न २. कोई पांच पर्यायवाची शब्द लिखिए ?

प्रश्न ३. कृष्ण और भगवान के पर्यायवाची शब्द लिखिए ?

प्रश्न ४. तिपहगा, दंडं, वियाणं, पल्लवो, केसरी किन शब्दों के पर्यायवाची रूप हैं ?

प्रश्न ५. अ, इ तथा ह वर्णों से प्रारंभ होने वाले कोई तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखिए ?

---- ० ----

अध्याय-१५

विविध-प्राकृतों की विशेषताएँ

भारत-ईरानी भाषा परिवार की आर्य शाखा परिवार की एक भाषा है प्राकृत। प्राकृत पूर्वकाल की जनभाषा रही है। इसके विकास के कई चरण हैं। विविध क्षेत्रों में बोली जाने से प्राकृत के भी कई रूप रहे हैं। यहाँ उनमें से प्रमुख प्रचलित भाषाओं की संक्षिप्त किन्तु तथ्यात्मक जानकारी प्रस्तुत की जा रही है। भगवान महावीर तथा बुद्ध ने तत्कालीन जनभाषा प्राकृतों में ही उपदेश दिया था। अत: प्राकृत को आर्ष प्राकृत भी कहा जाता है।

* कुछ प्रमुख प्राकृत भाषाएं एवं उनकी विशेषताएं-

(१) शौरसेनी प्राकृत-मध्यदेशीय शूरसेन प्रदेश में प्रयुक्त होने वाली भाषा शौरसेनी प्राकृत कहलाती है। प्राचीनतम शिलालेखों में इसका प्रयोग हुआ। पुराकालीन नाटकों में भी इसका पर्याप्त प्रयोग हुआ है। इस भाषा का महावीर स्वामी की परंपरा के श्रेष्ठतम आचार्यों ने सर्वाधिक प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए-षट्खंडागम, समयसार, मूलाचार, कात्तिकियानुप्रेक्षा, द्रव्यसंग्रह आदि ग्रंथ। सभी प्राकृतों की अपेक्षा यह अत्यंत व्यापक है, अत: वर्तमान में इसका सर्वाधिक साहित्य उपलब्ध होता है।

विशेषताएँ- १. अनादि असंयुक्त क, ग, च, ज, त, द, प, ब आदि व्यंजनों का प्राय: लोप हो जाता है। लुप्त व्यंजन के स्थान पर यदि अ-आ स्वर शेष हैं तो 'य' श्रुति होती है। यदि लुप्त वर्ण के पूर्व उकार हो तो 'व' श्रुति होती है। यथा- सामायिकम्=सामइयं, वचनैः=वयणेहिं, योजन=जोयण, प्रवचनम्=पवयणं, योगगुणधारी= जोयगुणधारी, संयोग:=संजोगो आदि। क्वचित् शौरसेनी में द तथा आवश्यकतानुसार अन्य व्यंजनों का भी लोप नहीं होता है।

२. प्राय: करके क को ग, त को द, थ को ध, ध को ह, भ को ह तथा ह को भ होता है। यथा-अवकाशम्=अवगासं, एकम्=एगं, प्रत्येकम्=पत्तेगं, नाथ:=णाहो, वृषभं=उसहं, कथं=कहं-कधं, औषधि=ओसही, गति:=गदी, मति:=मदी।

३. अनुनासिक वर्णों में केवल ण और म का ही प्रयोग होता है। स्वर के पूर्व आने वाले स्वर रहित अनुनासिकों को नियम से अनुस्वार हो जाता है। 'न्न' को ण्ण होता है। यथा- संयमेण= संजमेण, भुजङ्ग:=भुयंगो, किंचित्=किंचि, खण्डेषु=खंडेसु, नन्दित:=णंदिओ, संप्राप्ति=संपत्ती, अन्नं=अण्णं, मन्दिर:=मंदिरो।

४. कहीं-कहीं आवश्यकतानुसार व्यंजनों का द्वित्वीकरण होता है। यथा- त्रिलोकसार:=तिल्लोयसारो, अध्रुवम्=अद्धुवं, शौचम्=सउच्चं, महाव्रत:=महव्वदो, चतुष्कं=चउक्कं, धर्म:=धम्मो, कर्म=कम्मं।

५. सप्तमी एक वचन में म्मि, म्हि का प्रयोग भी देखा जाता है। यथा- जीवे=जीवम्मि-जीवम्हि, लोके=लोयम्मि-लोयम्हि।

६. क्त्वा प्रत्यय के स्थान पर 'च्चा', 'त्ता' का प्रयोग, होता है। यथा- ज्ञात्वा=णच्चा-णत्ता/जाणित्ता (जानकर)।

७. बिना विभक्ति के पदों का भी कहीं प्रयोग हो जाता है। यथा- संजम-सीलगुणधारी, अद्धुव-मसरण-मेगत्त, आदि।

८. केवल 'स' का ही प्रयोग होता है, 'श,ष' का नहीं। ..शेष सुगम है।

(२). महाराष्ट्री प्राकृत- गाथासप्तशती, सेतुबंध तथा गउडवहो आदि प्राचीन साहित्य की यह भाषा प्राय: शौरसेनी के समान है। इसमें त को द न होकर लोप, न को विकल्प से ण, तथा थ को ध न होकर ह होता है।

(३) अर्धमागधी प्राकृत- इसमें आधे लक्षण मागधी तथा आधे अन्य प्राकृतों के पाए जाते हैं, इसलिए यह प्राकृत अर्द्धमागधी कहलाती है। वस्तुत: पश्चिम में शूरसेन और पूर्व में मगध के बीच इसका प्रयोग होने के कारण इसे अर्द्धमागधी कहते हैं। वर्तमान् में प्रचलित अर्द्धमागधी भाषा वह नहीं है, जिसमें भगवान् महावीर ने उपदेश दिए, अपितु यह कालान्तर में संगठित भाषा मालूम पड़ती है।

विशेषताएं- १. लुप्त व्यंजन में प्राय: य श्रुति का प्रयोग। यथा-एतत्=एयं, श्रेणिकम्=सेणियं, बसंततिलका=बसंततिलया।

२. व्यंजन परिवर्तनों में क को ग, न को न-ण, प को व, होता है। यथा- एकदा=एगया, सज्जन:=सज्जणे-सज्जने, उपमा=उवमा।

३. प्रथमा विभक्ति के एकवचन में ओ प्रत्यय के अलावा ए का प्रयोग भी होता है। यथा- पुरुष:=पुरिसो-पुरिसे। चतुर्थी के एकवचन में आए प्रत्यय भी लगते हैं। यथा-पुरुषाय=पुरिसाए। तृतीय में मणसा, वयसा, धम्मुणा, कम्मुणा आदि कुछ विशेष प्रयोग भी बनते हैं।

४. धातुरूपों में भूतकालीन बहुवचनांत रूपों में इंसु, अंसु का प्रयोग होता है। यथा-अप्राक्षु:=पुच्छिंसु, आहु:=आहंसु। भूतकाल में होत्था, सेवित्था आदि रूपों का प्रयोग होता है।

५. आगम तथा आदेशों में ए का आगम, निरयगामी- निरयगामी। अम् के बाद

एव आने पर अम् को आम, तम्+एव=तामेव। यथा को जहा अथवा अहा, यावत् को आव-जाव, तर को तराय आदेश होता है।

यथा- यथानामकः=जहाणामए, यावज्जीवम्=जावज्जीवं, बहुतरः=बहुतराए।

६. कृदन्तों में क्त्वा प्रत्यय के स्थान पर ट्टु, च्चा, इत्ता, इत्ताणं, तुआणं,आय, आए आदेश होता है। यथा- कृत्वा-कट्टु, किच्चा, करित्ता, करित्ताणं, काउआणं, गृहीत्वा=गहाय, आदाय=आदाए, आदि।

तुम् को त्तए आदेश, यथा- द्रष्टुम्=पासित्तए।

(४) मागधी (पाली) प्राकृत- मगध प्रदेश की भाषा मागधी प्राकृत कहलाती है। इससे ही बौद्ध साहित्य की प्रमुख भाषा 'पाली' का विकास हुआ है। इसमें कई बोलियों का समावेश हुआ है। प्राचीन शिलालेखों एवं नाटकों में भी यह उपलब्ध होती है। अर्द्धमागधी की कुछ विशेषताएँ इसमें भी पाई जाती हैं।

विशेषताएँ- १. सरल व्यंजन परिवर्तन में ज को य, य अपरिवर्तित, र को ल, ष-स को श, तथा श अपरिवर्तित होता है। यथा- जनपदः=यणवदे, यदि=यदि, धीवरः=धीवले, माशः=माशे, पुरुषः=पुलिशे, शत्रुः=शत्तू।

२. संयुक्त व्यंजन परिवर्तन में क्ष को स्क, च्छ को श्च, ट्ट-ष्ट को स्ट, द्य-र्ज-र्य को य्य, न्य-ण्य-ज्ञ-ञ्ज को ञ्ञ, स्थ-र्थ को स्त, ष्-स् के बाद व्यंजन होने पर स् होता है। यथा- दक्षः=दस्के, गच्छ=गश्च, कोष्टागारम्=कोस्टागालं, मयं=मय्यं, दुर्जनः=दुय्यणे, कार्यः=कय्ये-कज्जो, अवज्ञा=अवञ्ञा, अंजलि=अञ्ञली, उपस्थितः=उवस्तिदे, सार्थवाहः=शस्तवाहे, कष्टं=कस्टं, मस्करी=मस्कली।

(५) अपभ्रंश- अपभ्रंश जनबोली के रूप में विकसित भाषा है। अपभ्रंश का अर्थ है- संस्कृत-व्याकरण के नियमों से मुक्त भाषा। अर्थात् अपभ्रंश ने प्राकृत और संस्कृत की व्याकरणनिष्ठ जटिलताओं को दूर किया। जनसामान्य की भाषा में साहित्य को प्रस्तुत किया। धीरे-धीरे यह कवियों और महर्षियों में भी रचना का सशक्त माध्यम बन गई। कविवर स्वयंभू, पुष्पदंत और रइधू की प्रभावक शैली का इसकेविकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

प्रमुख विशेषताएँ :-

१. संस्कृत की प्रथमा विभक्ति के एकवचन में पुल्लिंग अकारान्त शब्दों के अंतिम अकार के स्थान पर उकार होता है- स्वर्गः-सग्गू, दिनेन्द्रः-दिणिंदु।

२. षष्ठी विभक्ति के बहुवचन में अकारान्त शब्दों के "हँ" और "सु" प्रत्यय प्राप्त होते हैं- वीराणाम्-वीराहँ, पंकजाम्-पंकयाहँ।

३. षष्ठी के एकवचन में 'हि' का प्रयोग मिलता है- तस्याः-तहि।

४. संस्कृत शब्द रूपों के आदि, मध्य एवं अन्त में स्वरों का आगम हो जाता है- स्याद्वाद-सायवाय, दुर्जेय-दुज्जउ।
५. कुछ व्यंजन ध्वनियाँ पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जातीं हैं, जिससे समीकरण और विषमीकरण की प्रवृत्तियां प्रगट होती हैं- अंगारः-इंगालो, मृदुल-मउव।
६. सकार के स्थान पर कहीं-कहीं ह तथा संयुक्त व्यंजन 'त्स' एवं 'प्स' के स्थान पर 'च्छ' के प्रयोग मिलते हैं- वत्सल-वच्छल्ल, अप्सरा-अच्छर, निर्जुप्सा-णिज्जुगुच्छा, निर्विचिकित्सा-णिव्विदिगिच्छा।
७. वर्तमान कृदन्तों में 'माण' तथा संबंधसूचक कृदन्तों में इवि, एवि तथा एप्पिणु प्रत्ययों का प्रयोग अपभ्रंश के कृदन्तों की प्रमुख विशेषता है- पणविवि, झाएप्पिणु, भावेप्पिणु, होएवि आदि।

इस प्रकार अपभ्रंश भाषा में प्राकृत की सामान्य विशेषताएँ तो हैं ही साथ ही अपनी स्वतंत्र गुणधर्मिता से इसने साहित्य को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान भी दिया है। वर्तमान राष्ट्रभाषा हिन्दी इससे ही विकसित हुई है।

अभ्यास

प्रश्न १. शौरसेनी प्राकृत की कोई पाँच विशेषताएँ लिखिए ?
प्रश्न २. अर्द्धमागधी प्राकृत की कोई पाँच विशेषताएँ लिखिए ?
प्रश्न ३. मागधी प्राकृत के संबंध में ५० शब्द लिखिए ?
प्रश्न ४. अंजली, दुर्जन और जनपद शब्दों के शौरसेनी, अर्धमागधी और मागधी में प्राकृत रूप बनाइये ?
प्रश्न ५. शौरसेनी, अर्धमागधी और अपभ्रंश में उदाहरण सहित तुलना कीजिए ?
प्रश्न ६. निम्न लिखित शब्द कौनसी प्राकृत भाषा से संबंध रखते हैं ? विशेषता सहित स्पष्ट कीजिए- पत्तेगं, जोयण, गदी, सामवाय, एयं, शस्तवाहे।
प्रश्न ७. हाँ/ना में उत्तर लिखिए ?

(क) प्राकृत के अनेक रूप नहीं रहे हैं ? ( )
(ख) प्राचीन शिलालेखों में शौरसेनी का प्रयोग हुआ है ? ( )
(ग) अर्द्धमागधी में 'य' श्रुति का प्रयोग नहीं हुआ है ? ( )
(घ) मागधी प्राकृत से 'पाली' का विकास हुआ है ? ( )
(ङ) वर्तमान राष्ट्रभाषा अपभ्रंश का विकसित रूप है ? ( )

---- o ----

अध्याय-१६

वाक्य रचना

व्याकरण के सामान्य ज्ञान के बाद भी अध्येता वाक्य रचना में कठिनाई महसूस करते हैं। अत: यहाँ कुछ ऐसे सूत्रों का उल्लेख किया गया है, जिनसे वाक्य रचना सरल हो जाएगी।

सर्वप्रथम हम इस अध्याय को कुछ श्रेणियों में विभक्त कर रहे हैं।

(१). सामान्य रचना- वर्तमानकाल, भूतकाल, भविष्यकाल एवं विधिलिंग के वाक्य इसके अन्तर्गत समाहित हैं।

सूत्र- कर्त्ता+क्रिया- यह सूत्र सभी कालों में प्रयुक्त होगा।

उदाहरण- (हस्) हँसना क्रियारूप के साथ

(अ) अहं+हस्+आमि= अहं हसामि>मैं हँसता हूँ (वर्तमानकाल)

(ब) अहं+हस्+आसी= अहं हासी>मैं हँसा (भूतकाल)

(स) अहं+हस्+इहिमि= अहं हसिहिमि>मैं हँसूंगा (भविष्यकाल)

इसी प्रकार अन्य वाक्य बनेंगे।

(क) अहं नममु> मैं नमन करूँ (विधिलिंग एकवचन)

(ख) सो णच्चइ> वह नाचता है (वर्तमानकाल एकवचन)

(ग) अम्हे पढामो> हम सब पढ़ते हैं (वर्त.बहुवचन)

(घ) तुम्हें लिहित्था > तुम सब लिखते हो (वर्त. बहुवचन)

(ङ) ते खेलन्ति > वे सब खेलते हैं। (वर्त. बहुवचन)

(च) तुमं गच्छसि > तुम जाते हो।(वर्त. बहुवचन)

(छ) सो हसउ > वह हँसे (विधिलिंग एकवचन)

अभ्यास वाक्य

प्रश्न १. निम्न वाक्यों का अनुवाद प्राकृत में कीजिये।

१. वह पढ़ता है		२. तुम पढ़ो

३. तुम सब नाचते हो		४. वे सब खेले

५. हम सब जाएँगे		६. मैंने लिखा

(२).वाच्य प्रयोग- दूसरे चरण में कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य व भाववाच्य के वाक्यों के सूत्र उदाहरण सहित प्रस्तुत किए जाते हैं:-

(क). कर्तृवाच्य में कर्त्ता मुख्य होता है और क्रिया कर्त्ता के अनुसार चलती है। कर्त्ता में प्रथमा व कर्म द्वितीया विभक्ति होती है।

सूत्र- कर्त्ता+कर्म+ कर्त्तानुसार क्रिया का विवक्षित रूप=वाक्य

उदाहरण- वीरो+विज्जालयं+ गच्छदि= वीरो विज्जालयं गच्छदि (वीर विद्यालय जाता है)

(ख).कर्मवाच्य में कर्म मुख्य होता है और कर्म के अनुसार ही क्रिया का पुरुष, वचन व लिंग होता है। इसमें कर्त्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा विभक्ति होती है।

सूत्र- कर्त्ता (तृतीया) + कर्म (प्रथमा) + क्रिया (कर्मानुसार)= वाक्य।

उदाहरण- वीरेण+ कम्मं+ णस्सदि= वीरेण कम्मं णस्सदि (वीर के द्वारा कर्म नष्ट होते हैं)

(ग). भाववाच्य में कर्त्ता में तृतीया तथा अकर्मकक्रिया का केवल प्रथम पुरुष का एक वचन ही होता है। इसमें सकर्मक क्रिया नहीं होती।

सूत्र- कर्त्ता (तृतीया) + अकर्मक क्रिया (केवल प्रथम पुरुष का एक वचन) =वाक्य

उदाहरण- महावीरेण+ हसिज्जदि =महावीरेण हसिज्जदि (महावीर के द्वारा हँसा जाता है)।

अभ्यास वाक्य-

१. ऋषभदेव के द्वारा राज्य किया जाता है।

२. राम अयोध्या का भलीभाँति पालन करते थे।

३. ऋषभदेव पुत्र भरत के नाम से यह देश भारत कहलाया।

४.बाहुबली के द्वारा चक्रवर्ती जीता गया।

५. पार्श्वनाथ द्वारा हँसा जाता है।

* प्रेरणार्थक वाक्यों में कर्त्ता कर्म वाच्यानुसार होते हैं; किंतु क्रिया में 'आवे' तथा तदनुसार प्रत्यय जुड़ जाता है।

सूत्र- कर्त्ता+कर्म+क्रिया+आवे+कर्त्तानुसार क्रिया का प्रत्यय = वाक्य।

उदाहरण- अहं+ बालगा+पढ+आवे+मि= अहं बालगा पढावेमि (मैं बालकों को पढ़वाता हूँ)

अभ्यास वाक्य-

१.गुरु शिष्यों को लिखवाता है।

२. विद्वान् सज्जनों को बुलवाता है।

४. कृदन्त- यह प्राकृत का महत्वपूर्ण चरण है, कृदन्त के वाक्य प्रयोग के लिये निम्न सूत्र उपयोगी सिद्ध होगा।

सूत्र- कर्ता + कृदन्त + क्रिया= वाक्य

(अ) *वर्तमान काल*= कर्ता + कृदन्त (न्त, माण) + क्रिया सो + भुजंतं + हसदि

सो भुजंतं हसदि > वह भोजन करते हुए हँसता है।

सा णच्चमाण पडदि > वह नाचते हुए गिरती है।

तुमं दिठ्ठन्तं ठाहीअ > तुम देखते हुए ठहरते हो।

(ब) *भूतकाल*- कर्ता + कर्म + कृदन्त (अ, य, त, द)

तेण णव-पोत्थआणि पढिआणि > उसके द्वारा नौ पुस्तकें पढ़ी गई।

ताओ मुहु मुहु हसिया > उसके द्वारा बार बार हँसा गया।

संबंध सूचक भूत कृदन्त-

तुमं लिहितुं बोल्लसि > तुम लिखकर बोलते हो।

कर्ता + कृदन्त (तुं/ अ/ तूण, तुआणं/इत्ताणं/ आए

तुम्हे गंथं गहाय हरिसीअ > तुमसब ग्रंथ ग्रहण करके प्रसन्न हुए।

(स). *हेत्वर्थक कृदन्त*- (कर्ता + कृदन्त (उ, त्तए)

सो हसित्तए चित्तं दिठ्ठदि > वह हँसने के लिये चित्र देखता है।

सो खेलिउ खेत्तं गच्छीग > वह खेलने के लिये मैदान में गया

(द). *विध्यर्थक कृदन्त*- कर्ता + कृदन्त (तत्त्व, अणिज्ज अणीअ)

तुमं सत्थं पढिअव्व > तुम्हें शास्त्र पढ़ना चाहिए।

तं मोयणं भुंजितव्वं > उसे भोजन करना चाहिए।

वीरस्य उवदेसं सुणिअव्वं > वीर का उपदेश सुनने योग्य है।

इणं सिग्घं चलणीयं > इसे शीघ्र चलना चाहिए।

(इ). कर्तृ सूचक कृदन्त > कर्ता + कृदन्त (इरो, इरा)

राया हसिरो बोल्लइ > राजा हँसता हुआ बोलता है।

णच्चिरा जुवदी सोहीअ > नाचती हुई युवती शोभित होती है।

अभ्यास

प्रश्न १. कर्तृवाच्य के वाक्य किस प्रकार बनते हैं?

प्रश्न २. कर्मवाच्य और भाववाच्य में क्या अंतर है?

प्रश्न ३. प्रेरणार्थक वाक्य बनाने के लिए क्या करना चाहिए?

प्रश्न ४. भूत, भविष्य व वर्तमान कृदंत का एक-एक प्राकृत वाक्य लिखो?

प्रश्न ५. हे त्वर्थ एवं विध्यर्थ कृदंत के प्रत्यय लिखिए?

---- o ----

अध्याय-१७

प्राकृत लघु निबंध

१. अणुवेक्खा

इणं संसारसायरे अणंताणंतो जीवरासी अत्थि। मुक्खरूवेण णिगोदमज्झे सव्वुक्कट्ठ-सव्वाहिगो जीवसंखा अत्थि। अदिपुण्णजोगेण तत्तो णीसरऊण जीवा थावर-विगलिंदयादी पज्जया पावेंति। मणुसगदी अच्चंत दुल्लहं अत्थि। तेसु कुल-सील-आऊ-धम्म तहा महव्वदादिए उवलद्धी अइदुल्लहं अत्थि। जे मणुसगदी पाऊण भोगासत्ता जादा, ते भूई णिमित्तं रयणं पजालंतं पुरुसव्व अत्थि।

सव्वुक्कट्ठं मणुसदेहं पाऊण अप्पकल्लाण करणीयं अत्थि। जे सम्मत्तं सण्णाणं सच्चारित्तं च गहिऊण सिद्धिं साहेंति ते चिय सप्पुरिसा, सहलजिविदं अत्थि, सेसा णिप्फला मणुसा पसुव्व अत्थि।भावणासारे वि उत्तं-

अथिरं मित्त-लावण्णं, कलत्तं सुजणं तहा।
धण-धण्णादि गेहं च, सव्वं हि जल बुव्वदं॥७॥

सव्वण्हू भासिदं सत्तच्चस्स तहा बारसाणुवेक्खस्स चिंतणं कल्लाणकारी य सुमंगदायी अत्थि। णाणी णाणेण विसुज्झदि। पण्णवंत पुरुसा दया-अहिंसा-अणुवेक्खा-महव्वादि संजुत्ता होंति।

हिंदी अनुवाद- अनुप्रेक्षा

इस संसार सागर में अनंतानंत जीवराशी है। मुख्यरूप से निगोद के बीच में सबसे उत्कृष्ट, सबसे अधिक जीवों की संख्या है। अति पुण्य-योग से उससे निकलकर जीव स्थावर विकलेन्द्रिय आदि पर्यायें प्राप्त करते हैं। मनुष्य गति अत्यन्त दुर्लभ है। उसमें कुल, शील, आयु, धर्म तथा महाव्रतादि की उपलब्धि अति दुर्लभ है। जो मनुष्य गति प्राप्त करके भोगासाक्त हो जाते हैं। वे राख के लिये रत्नों को जलाने वाले पुरुष के समान हैं।

सबसे उत्कृष्ट मनुष्य देह प्राप्त करके आत्मा का कल्याण करने योग्य है। जो सम्यक्त्व, सुज्ञान, उत्तम चरित्र, ग्रहण करके सिद्धि का साधन करते हैं, वे ही सत्पुरुष सफल जीवन जीते हैं। शेष मनुष्य निष्फल और पशु के समान हैं।

भावनासार में भी कहा गया है-

मित्र, लावण्य, सुंदर स्त्री, स्वजन तथा धन-धान्यादि और घर सब कुछ ही वस्तुतः जल के बुलबुले के समान अस्थिर है। सर्वज्ञभाषित सत्य तत्त्व का तथा द्वादश अनुप्रेक्षाओं का चिंतन कल्याणकारी तथा सुमार्ग देने वाला होता है। ज्ञानी ज्ञान से विशुद्ध होता है। प्रज्ञावान पुरुष दया अहिंसा, अनुप्रेक्षा, और महाव्रतादि से संयुक्त होते हैं।

२. खम्मामि सव्वजीवाणं

जत्थ सदा संती, कारुण्ण, णेहो, मित्तिभावं च अत्थि, तत्थेव खमा हवदि। खमाभावेण परोप्परं समभावं मित्तीभावं च उप्पज्जेदि। संती, सोहद्दं च पाडुब्भवदि। इमत्तो अण्णेसिं मणस्स कोहं, कुवियारं, विरोहजण्ण-जीवाणं च उवसमिज्जदि। वइरं, कडुत्तं, विरोहं, पडिसोहं च खमेण णासं पावेंति, खमा! खमा!! खमा!!! सव्वत्था पसरदि।

महाणुभावा, णाणीजणा सदेव खमा-सीलो होंति। ते अण्णेसिं कोहेणं कदावि ण कुप्पेदि। जे अण्णेंसि दोसाणं दिट्ठी कदावि ण देंति। ते सव्वे जीवाणं, सत्ताणं, पाणानं, भूदाणं, च णियप्पसारिच्छमेव मण्णंति। ते महागुणा पियं-अप्पियं संतीए साहेंति। उत्तं च वड्ढमाण महावीरस्स पढमसिस्स इंदभूति-गोदमेण पडिक्कमण सुत्ते-

खम्मामि सव्वजीवाणं, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूदेसु, वेरं मज्झं ण केण वि॥

खमाए जणा भाणुसमा अण्णाण-अंधयारं हणेंति, गुणाणं पगडएंति, जस-संचयं करेंति तहा पुढवीसमा सहणसीलं होंति। ते खंतिएण उवसग्ग-परीसहं च जिणेंति। खमागुणो अच्चंतकल्लाणयारी अत्थि।

हिंदी अनुवाद- मैं सभी जीवों से क्षमा चाहता हूँ

जहाँ सदा शांति, करुणा, नेह और मैत्री भाव है, वहाँ ही क्षमा होती है। क्षमा भाव से परस्पर समभाव और मैत्रीभाव उत्पन्न होता है। शांति और सौहार्द्र प्रादूर्भूत होता है। बैर, कड़वाहट, विरोध व प्रतिशोध नष्ट हो जाता है। क्षमा... क्षमा... क्षमा सब ओर फैलती है।

महानुभाव, ज्ञानी जन सदा ही क्षमावान् और शीलवान् होते हैं। वे अन्यों

पर कभी भी क्रोध नहीं करते। वे अन्य के दोषों को कभी नहीं देखते। वे सब जीवों, सत्वयुक्तों, प्राणियों और भूतों को स्वयं के समान मानते हैं। वे महागुणवान् प्रिय और अप्रिय शांति से सहते हैं। वर्द्धमान महावीर के प्रथम शिष्य इन्द्रभूति गौतम ने प्रतिक्रमण सूत्र में कहा गया है-

मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा करें। मेरा सभी प्राणियों से मैत्री भाव है। मेरा किसी से भी बैर नहीं है।

क्षमा से व्यक्ति सूर्य के समान अज्ञान-अंध कार नष्ट करते हैं। गुणों को प्रगट करते हैं। यश का संचय करते हैं। तथा पृथ्वी के समान सहनशील होते हैं, वे शांति से उपसर्ग और परिषह जीतते हैं। क्षमा गुण अत्यन्त कल्याणकारी है।

३.अहिंसा परमो धम्मो

धम्मस्स अणेग लक्खणाणि वट्टंते। जहा-कत्तिगेयाणुपेक्खाए-

वत्थूसहावो धम्मो, उत्तम खमादि य दसविहो धम्मो।
रयणत्तयं च धम्मो, जीवाणं रक्खणं धम्मो ।।

पडिक्कमणसुत्ते वीर भत्तिए गोदमसामीए वुत्तं-

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तस्स पणमंति, जस्स धम्मो सया मणो।।

वत्थुदो अहिंसा सेट्ठ-धम्मो अत्थि। स-पर रक्खा जुत्तो जीवो सुट्ठू धम्मिगो अत्थि. अहिंसा धम्मसमायरणेण उत्तमा गदी होदि, सत्तू वि मित्ततणेण आयरंति, अग्गी जलरूवेण परिणमदि, विसो वि अमिदरूवं होदि। अदो जे सेयं इच्छंति ते अहिंसा धम्मस्स आयारं कुणंति। अहिंसा दयाविसुद्धो परमो धम्मो अत्थि।

हिंदी अनुवाद- अहिंसा परम धर्म है

धर्म के अनेक लक्षण हैं। जैसे- कार्तिकेयानुप्रेक्षा में कहा है- वस्तु का स्वभाव धर्म है, धर्म उत्तम क्षमादि दस प्रकार का है, रत्नत्रय धर्म है और जीवों की रक्षा करना धर्म है। प्रतिक्रमण सूत्र में वीर भक्ति में गौतम स्वामी के द्वारा कहा गया है- धर्म उत्कृष्ट मंगल है। यह धर्म अहिंसा संयम और तप रूप है। देवता भी उसे प्रणाम करते हैं, जिसके मन में धर्म सदा रहता है।

५. राया सेणिगो

इदिहास-गंथ मध्ये बिंबसारणामेण पसिद्धो राया सेणिगो खत्तियवंशी, धम्मणिट्ठो, सुसावगो आसी। सो कत्तव्वणिट्ठो, कम्म परायणो, वियारगो, उदारच्चेदा, पराक्कमी, जिणिंदभत्तो, दाणी, णाणजणाणं माणी, सम्माणी विणीदो रायणेइण्णो वि। तस्स पिदू वि सावग-गुणाहि विहूसगो णामेणं च उवसेणिगो, मादुसिरी इंदाणी अइधम्मपरायणा आसी।

सो सेणिगो वड्ढमाण महावीर जिणिंदस्स पढमो सोदा जादं। तस्स बारिसेण, अभयकुमार, मेघकुमार इच्चादि धम्मपरायणा सेट्ठ-पुत्ता जादा। तेण राएण धम्म-कम्माणुवादेण कालक्खेवं कीरिदं। अइ णायसंपण्णो, पजावच्छलो, लोगणेदा, महावीरस्स य जिणधम्म भत्तो सो राजा जयदु।

हिंदी अनुवाद- राजा श्रेणिक

ऐतिहासिक ग्रंथों में बिंबसार नाम के प्रसिद्ध राजा श्रेणिक क्षत्रिय वंशी धर्म निष्ठ सुश्रावक हुआ है। वह कर्त्तव्य निष्ठ, कर्म-परायण, विचारक, उदारचित्त, पराक्रमी, जिनेन्द्रभक्त, दानी, ज्ञानी जनों का मान करने वाला, सम्माननीय के प्रति विनीत, राजाओं से सदा घिरा रहता था। उसका पिता भी श्रावक गुणों से विभूषित उपश्रेणिक नाम का था, और माता श्री इंद्राणी नाम की अतिधर्मपरायणा थीं।

वह श्रेणिक वर्द्धमान महावीर जिनेन्द्र का प्रथम श्रोता था। उसके वारिषेण, अभयकुमार, मेघकुमार इत्यादि धर्मपरायण श्रेष्ठ पुत्र हुए, उस राजा के द्वारा धर्म-कर्म कर्मानुवाद में समय व्यतीत किया गया। अत्यंत ज्ञान सम्पन्न प्रजा वत्सल, लोक नेता, महावीर का व जिनधर्म का भक्त वह राजा जयवंत हो।

अभ्यास

प्रश्न १. ज्ञानीजन कैसे होते हैं?

प्रश्न २. राजा श्रेणिक की चारित्रिक विशेषताएँ लिखिए?

प्रश्न ३.मनुष्य गति की दुर्लभता पर प्राकृत में टिप्पणी लिखिए?

प्रश्न ४. क्षमा करने से क्या लाभ है? प्राकृत में ५० शब्द लिखिए।

प्रश्न ५ भगवान महावीर ने दीक्षा लेकर क्या कार्य किया?

---- o ----

अध्याय-१८

प्राकृत चयनित गाथाएँ

१.पवयणसारो

एस सुरासुरमणुसिंदवंदिदं धोदघाइकम्ममलं।
पणमामि वड्ढमाणं तित्थं धम्मस्स कत्तारं।।१।।

अर्थ- जो सुरेन्द्रों, असुरेन्द्रों और नरेन्द्रों से वन्दित हैं तथा जिन्होंने घाति कर्ममल को धो डाला है ऐसे तीर्थ रूप और धर्म के कर्ता श्री वर्धमान स्वामी को मैं नमस्कार करता हूँ।

सेसे पुण तित्थयरे ससव्वसिद्धे विसुद्धसब्भावे।
समणे य णाणदंसणचरित्ततववीरियायारे।।२।।

अर्थ- और विशुद्ध सत्तावाले शेष तीर्थंकरों को सर्व सिद्ध भगवन्तों के साथ ही, और ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार तथा वीर्याचार युक्त श्रमणों को नमस्कार करता हूँ।

ते ते सव्वे समगं समगं पत्तेगमेव पत्तेगं।
वंदामि य वट्टंते अरहंते माणुसे खेत्ते।।३।।

अर्थ- उन उन सबको तथा मनुष्य क्षेत्र में विद्यमान अर्हन्तों को साथ ही साथ समुदाय रूप से और प्रत्येक प्रत्येक को व्यक्तिगत वन्दना करता हूँ।

किच्चा अरहंताणं सिद्धाणं तह णमो गणहराणं।
अज्झावयवग्गाणं साहूणं चेव सव्वेसिं।।४।।
तेसिं विसुद्धदंसणणाणपहाणासमं समासेज्ज।
उवसंपयामि सम्मं जत्तो णिव्वाणसंपत्ती।।५।।

अर्थ- इस प्रकार अरहन्तों को, सिद्धों को, आचार्यों को, उपाध्याय वर्ग को और सर्व साधुओं को नमस्कार करके उनके विशुद्ध दर्शन-ज्ञानप्रधान आश्रम को प्राप्त करके मैं साम्य को प्राप्त करता हूँ, जिससे निर्वाण की प्राप्ति होती है।

२. दव्वसंगहो

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंद-विंद-वंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा।।१।।

अर्थ- जिस तीर्थंकर परमदेव ने जीव और अजीव द्रव्यों को कहा है,

इन्द्रों के समूह द्वारा नमस्कार करने योग्य उनको मैं (आचार्य नेमिचन्द्र) सिर से हमेशा नमस्कार करता हूँ।

जीवो उवओगमओ, अमुत्ति कत्ता सदेहपरिणामो।
भोत्ता संसारत्थो, सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई।।२।।

अर्थ- वह जीने वाला है, उपयोगमय, अमूर्तिक, कर्त्ता, अपने शरीर के बराबर परिमाण वाला, भोक्ता, संसारी, सिद्ध और स्वभाव से ऊपर की ओर जाने वाला है।

तिक्काले चदुपाणा, इंदिय-बल-माउ-आणपाणो य।
ववहारा सो जीवो, णिच्छय-णयदो दु चेदणा जस्स।।३।।

अर्थ- व्यवहार नय से जिसके तीनों कालों में इन्द्रिय, बल, आयु और स्वासोच्छ्वास ये चार प्राण हैं और निश्चय नय से जिसके चेतना है वह जीव है।

उवओगो दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु-अचक्खू ओही, दंसणमध केवलं णेयं।।४।।

अर्थ- उपयोग दो प्रकार का होता है- दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग। उसमें से दर्शनोपयोग चार प्रकार का है- चक्षुदर्शनोपयोग, अचक्षुदर्शनोपयोग, अवधिदर्शनोपयोग और केवल-दर्शनोपयोग।

णाणं अट्ठविणप्पं, मदि-सुद-ओही-अणाण-णाणाणि।
मणपज्जय-केवलमवि, पच्चक्ख-परोक्खभेयं च।।५।।

अर्थ- अज्ञान और ज्ञान के रूप से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का है- मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान, अवधि-अज्ञान, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान। यह ज्ञानोपयोग प्रत्यक्ष और परोक्ष के भेद से दो प्रकार का भी है।

३. भारदी - त्थुदी

(भारती स्तुति, गायन शैली- जयतु संस्कृतं)

जयदु भारदी, जयदु भारदी
जिणवाणी सारदा, सुयदेवी सरस्सदी।

अर्थ- जिनवाणी, शारदा, श्रुतदेवी तथा सरस्वती आदि नामों से युक्त भारती जयवन्त हो, भारती जयवन्त हो।

वीरमुह णिग्गदा, गोदमादि गंथिदा; सुद-सूरी भासिदा, गुणधरादि विरइदा।
कुंदकुंद-भारदी, सुदधरादि धारदि; जिणवाणी सारदा, सुयदेवी सरस्सदी।।जयदु.१।।

अर्थ- वीर जिनेन्द्र के मुख से निर्गत, गौतमादि गणधरों द्वारा द्वादशांग रूप से ग्रंथित, श्रुत केवलियों द्वारा कथित, गुणधर, पुष्पदंत-भूतबली आदि आचार्यों द्वारा विरचित, कुन्दकुन्द-भारती तथा श्रुतधराचार्यों द्वारा धारण की गई जिनवाणी शारदा, श्रुतदेवी तथा सरस्वती आदि नामों से युक्त भारती जयवन्त हो, भारती जयवन्त हो।

अण्णाण-तम-हारिणी, सण्णाण-सुद-कारिणी,
सदद-संतिदायिणी, बारसंग धारिणी।
मिच्छत्त-अंध-णासदि, सम्मत्त-सम्म-सासदि,
जिणवाणी सारदा, सुयदेवी सरस्सदी॥जयदु.२॥

अर्थ- अज्ञानतम को हरने वाली, सद्ज्ञान-श्रुत को करने वाली, सतत-शांति देने वाली, द्वादशांगरूप बारह अंगों को धारण करने वाली, मिथ्यात्त्व-अंधकार को नाशने वाली, सम्यक्त्व का अच्छी तरह शासन कराने वाली, जिनवाणी, शारदा, श्रुतदेवी तथा सरस्वती आदि नामों से युक्त भारती जयवन्त हो, भारती जयवन्त हो।

विसय-विस-रेयणं, जम्ममरण-छेदणं,
जिणवयण-मोसहं, सत्थ हि सुहारसं।
कम्मपुंज य जारदि, भवजलहि तारदि,
जिणवाणी सारदा, सुयदेवी सरस्सदी॥जयदु.३॥

अर्थ- विषयरूपी विष का विरेचन करने हेतु, जन्म-मरण का छेदन करने हेतु जिनवचन ही औषधि है, वस्तुतः शास्त्र ही सुधारस हैं। जो कर्म पुंज को जलाती है, और संसाररूप समुद्र से तारती है, ऐसी जिनवाणी शारदा, श्रुतदेवी तथा सरस्वती आदि नामों से युक्त भारती जयवन्त हो, भारती जयवन्त हो।

४. परमेट्ठी-त्थुदी

(परमेष्ठी स्तुति, उपजाति-छंद)

घादि-चदुक्कं खविदूण कम्मं, अणंत-णाणादि चदुक्क पत्तं।
णिरवेक्खं-बंधू तिल्लोयणाहं, अरहंतदेवं तं हं णमामि॥१॥

अर्थ- जो चार घातिया कर्मों को नष्ट कर अनन्त ज्ञानादि चतुष्टय को प्राप्त हुए हैं, भव्य जीवों के निरपेक्ष-बन्धु और तीन लोक के स्वामी हैं, उन अरहंत देव को मैं नमन करता हूँ।

णट्ठट्ठकम्मं विगदं - सरीरं, गुणट्ठ पत्तं थिर-अप्पभावं।
देहप्पमाणं सुविसुद्ध सत्तं, णिच्चं णमामि तं सिद्धभयवं॥२॥

अर्थ- जो नष्टाष्ट कर्म अर्थात् ज्ञानावरण आदि आठों कर्मों से रहित हैं, विगत शरीर अर्थात् शरीर रहित हैं, सम्यग्दर्शन आदि अष्ट गुणों को प्राप्त-आत्म स्वभाव में स्थिर, शरीर-प्रमाण शुद्ध आकार वाले तथा अत्यन्त विशुद्ध आत्मा वाले हैं, उन सिद्ध भगवान को मैं नित्य नमन करता हूँ।

णाणादि-आयारे पण्णं सुजुतं, सिक्खेदि सत्थं णियसिस्सवग्गं।
दिक्खादि दायं कुसलं मुणिंदं, कप्पादि-णिट्ठं पणमामि सूरिं॥३॥

अर्थ- जो ज्ञान आदि पांच आचारों में अच्छी तरह से युक्त हैं, अपने शिष्य वर्ग को शास्त्र सिखाते हैं, दीक्षादि देने में कुशल मुनीन्द्र हैं तथा आचेलक्य आदि कल्पों में निष्ठ हैं, उन आचार्य को मैं प्रणाम करता हूँ।

आयार-सुत्तं च ठाणादि अंगे, उप्पाद-पुव्वंग इच्चादि सत्थे।
जुत्तं सयं जुंजदि साहुवग्गं, उवज्झाय-साहुं सम्मं णमामि॥४॥

अर्थ- जो आचारांग सूत्र, स्थानांग सूत्र आदि अंग-साहित्य और उत्पाद आदि पूर्वगत साहित्य के शास्त्रों में स्वयं युक्त हैं तथा साधुवर्ग को भी उनके अध्ययन में लगाते हैं, उन उपाध्याय साधु को मैं सम्यक् रूप से नमन करता हूँ।

आसा-कसाया विसयादु रित्तो, णाणे य झाणे समदाए चिट्ठो।
सुलीणो ति-रयणं पालणत्थे, तं साहुवग्गं सददं णमामि॥५॥

अर्थ- जो आशा-कषायों, विषय-वासनाओं से रहित हैं, ज्ञान-ध्यान में तथा में समता भाव में स्थित हैं या चेष्ठावान् हैं और रत्नत्रय पालन के प्रयोजन में अच्छी तरह से लीन हैं, उन साधु-वर्ग को मैं सदैव नमन करता हूँ।

परमेट्ठिं णमुक्कारं, तिजोगेण करेदि जो।
णासेदि दुक्ख-संदोहं, कल्लाणं सव्व-पावदे॥

अर्थ- जो त्रियोगों से पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करता है, वह दुःख समूह को नष्ट करता है तथा सभी कल्याणों (सुखों) को पाता है।

५.जिणिंद-त्थुदी

(जिनेन्द्र-स्तुति, उपजाति-छंद)

चक्कीए इंदाहि य पूयणीयो, धणोरगिंदाहि य अच्चणीयो।
अणंत-जीवाण कल्लाण-कत्ता, सुमग्गदायं अरहं णमामि॥१॥

अर्थ- चक्रवर्ती व देवेन्द्रों द्वारा पूज्यनीय, धनेन्द्र (कुबेर) व नागेन्द्रों से अर्च्यनीय, अनंत जीवों का कल्याण करने वाले तथा सुमार्ग दिखाने वाले अरहंत भगवान को मैं नमन करता हूँ।

दोसादु रित्तं पडिहेर-जुत्तं, अणंत णाणादि गुणाण पत्तं।
जम्मं च मिच्चुं च विणासणट्ठं, जिणिंद भयवं णिच्चं णमामि॥२॥

अर्थ- अठारह दोषों से रहित, आठ प्रातिहार्य युक्त तथा अनंत ज्ञान आदि गुणों को प्राप्त जिनेन्द्र भगवान को जन्म-मृत्यु और बुढ़ापा के विनाश के लिए मैं नित्य नमन करता हूँ।

विग्घा पणस्संति भयं ण जंति, णो छुद्ददेवा परिणीडयंति।
अत्थं जहेच्छं च णरा लहंते, णस्संति पावं जिणदंसणेणं॥३॥

अर्थ- जिनेन्द्र भगवान के दर्शन से विघ्न नष्ट हो जाते हैं; भय नहीं आते हैं, न छुद्रदेव ही परेशान करते हैं अपितु जिनभक्ति से मनुष्य यथेष्ट धन को पाते हैं और सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

मूगो य बोल्लेदि पंगू चलेदि, पस्सेदि अंधो बहिरो सुणेदि।
जस्सप्पसादेण णट्ठेदि विग्घं, जिणिंदभयवं तं हं णमामि॥४॥

अर्थ- जिनके प्रसाद से मूक मनुष्य बोलता है, पंगु चलता है, अंधा देखता है, बहरा सुनता है तथा समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं उन जिनेन्द्र भगवान को मैं नित्य नमन करता हूँ।

रोगा ण पस्संति कुविदा समाणा, दालिद्द पस्संति चगिदा हि दूरा।
कुगदी विरत्ता सत्तू समाणा, जिणदंसणेणं णमस्सणेणं॥५॥

अर्थ- जिनेन्द्र देव के दर्शन से तथा नमस्कार करने से रोग कुपित हुए के समान जिनभक्त को नहीं देखते हैं, दारिद्र चकित हुए के समान दूर से देखता है अर्थात् निर्धनता नहीं आती तथा कुगति शत्रु के समान विरक्त रहती है।

बंहा य विण्हू सिव-विस्सकम्मा, बुद्धो गणेसो य णामेहि जुत्ता।
रामं हरिं जिण-पणट्ठ-कम्मा, जिणिंदभयवं णिच्चं णमामि॥६॥

अर्थ- जिन्होंने नष्ट कर दिए हैं ज्ञानावरणादि समस्त कर्म ऐसे ब्रह्मा, विष्णु, शिव, विश्वकर्मा, बुद्ध, गणेश, राम, हरि और जिन आदि नामों से युक्त जिनेन्द्र भगवान को मैं नित्य नमन करता हूँ।

दिणेक्क जादा सुहपुण्ण-पुंजा, जिणिंद-देवस्स णमस्सणेणं।
अणंत जम्मेण सो वि णो जादा, णंतेण कज्जेण सुमंगलेणं॥७॥

अर्थ- जिनेन्द्र देव को नमस्कार करने से जितना शुभकर्म रूप पुण्य का पुंज एक दिन में ही उत्पन्न हो जाता है, उतना पुण्यपुंज मंगलमय अनंत कार्यों से अनंत जन्मों में भी नहीं उत्पन्न होता है।

पूजा जे कुव्वंति जिणेस्सराणं, झायंति वा भावविसुद्ध-चित्ता।
ते सज्जणा ताव-विणासणट्ठं, पावंति मोक्खं सुह-सग्ग-भुत्ता॥८॥

अर्थ- जो श्रेष्ठ मनुष्य संसार-ताप विनाश के प्रयोजन से जिनेन्द्र भगवंतों की अष्टद्रव्य से पूजा करते हैं अथवा अत्यन्त विशुद्ध भाव युक्त चित्त से ध्यान करते हैं, वे सज्जन स्वर्ग सुख भोगकर मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

जिणिंद-त्थुदिं जो णिच्चं, पढेदि वा सुणेदि वा।
ईसरत्तं च पाऊण, सग्गं मोक्खं च पावदे॥

अर्थ- जो नित्य ही इस जिनेन्द्र स्तुति को पढ़ता है अथवा सुनता है वह सांसारिक ऐश्वर्य प्राप्तकर क्रमशः स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त करता है।

६.गोम्मटेस-अट्ठगं

(गोम्मटेश अष्टक, मालिनी-छंद)

उसहजिण-सुपुत्तं सुणंदाणेत्त रम्मं, णिव-भरह कणिट्ठं अदि-उत्तुंग देहं।
पउदणपुर-धीसं साहिमाणी गिरिव्वं, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि॥१॥

अर्थ- ऋषभदेव के सुपुत्र, माता सुनंदा की आँखों के रम्य, नृपश्रेष्ठ भरत चक्रवर्ती के छोटे भाई, अति-उत्तुंग देहधारी, पोदनपुर के स्वामी, पर्वत के समान स्वाभिमानी तथा तीन लोक के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

लसदि णयणसोहा तिट्ठिदा णासिकग्गे, लसदि य ओट्ठपंती सामजुत्तं सुरम्मं।
लसदि चिउग सेट्ठं कंबुकंठं च कंधं, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि॥२॥

अर्थ- जिनकी नासिका के अग्र भाग में स्थित नयनों की शोभा सुशोभित है, जिनकी ओष्ठ-पंक्ति (रेखा) साम्यभावयुक्त सुरम्य और लसित है, जिनका चिबुक (ठोड़ी), शंख के समान कंठ तथा कंधा (स्कंध) अत्यंत शोभायमान हैं, उन भुवन के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

तणु-विहव अतुल्लं भासुरा सोम-मुद्दा, विलसदि दुवि बाहो हत्थी सुंढव्व दिग्घं।
पुठि-पडल समीवे इंदवज्जो वि हीणं, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि॥३॥

अर्थ- जिनके शरीर का वैभव अतुल्य है, जिनकी मुखमुद्रा उगते हुए सूर्य के समान सौम्य है, जिनके लटकते हुए दोनों बाहु हाथी की सूड़ के समान लम्बे हैं, जिनके पृष्ठ-पटल के सामने इंद्र का वज्र भी हीन है, उन भुवन तल के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

अगणिद ससिलेहा कंतिहीणा भवंति, सुह चरणणहाणं चंदगाणं समीपे।
तह य सयल मुद्दा देदि मोक्खस्स दिट्ठी, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि ॥४॥

अर्थ- जिनके शुभ चरणों की अंगुलियों में शोभित नखों के पास अगणित चंद्र किरणें कांतिहीन हो जाती हैं तथा जिनकी संपूर्ण मुद्रा मोक्षमार्ग की दृष्टि प्रदान करती है, उन भुवन तल के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

दमयदि मयणाणं वाहिणिं च समूलं, वितरदि भविजीवं सेट्ठ सम्मं सुहं च।
दलदि कलुसपुंजं रक्खदे सज्जाणाणं, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि ॥५॥

अर्थ- जो सेना सहित मदन (कामदेव) को जड़ से दमन करते हैं, भव्य जीवों को श्रेष्ठ व सम्यक् सुख देते हैं, कलुषित कर्मपुंज को नष्ट करते हैं तथा सज्जनों की रक्षा करते हैं, उन भुवन तल के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

ण य मद मल रेहा णो कसायादि दोसा, ण य मरण जराणं जम्मं च णत्थि जस्स।
विसद विमल बोहो सम्मदिट्ठी जुदा जो, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि ॥६॥

अर्थ- जिनके मद रूपी मल की रेखा नहीं है, कषाय आदि दोष नहीं हैं, जन्म, मरण व बुढ़ापा जिनके नहीं हैं, जो स्पष्ट व निर्मल बोध युक्त सम्यक्दृष्टि वाले हैं, उन भुवन तल के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली भगवान को मैं नमन करता हूँ।

सुर-णर-णयणेहिं पूजिदा जस्स मुत्ती, णिहिल-मुणिवरेहिं अच्चिदा जस्स कित्ती।
विमल-करुण-भावा रक्खदे जीवलोगं, भुवण-मउडरूवं गोम्मटेसं णमामि ॥७॥

अर्थ- जिनकी मूर्ति देव व मनुष्यों के नयनों से पूजित है, जिनकी कीर्ति संपूर्ण मुनिवरों के द्वारा अर्चित है, निर्मल करुणाभाव से जो जीवलोक की रक्षा करते हैं, उन भुवन तल के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली भगवान को मैं नमन करता हूँ।

पयड विमल रम्मं जहाजादं च रूवं, किद-बरिसुववासं अप्पलीणं सहावं।
रहिद सयल संगं, वीदरागं णिसल्लं, भुवण-मउडरूवं गोमटेसं णमामि ॥८॥

अर्थ- जिनका प्रकट, विमल, रमणीय यथाजात रूप है, जिन्होंने एक वर्ष के उपवास किए व जो आत्मलीन स्वभाव वाले हैं, संपूर्ण परिग्रह से रहित वीतरागी निःशल्य हैं, उन भुवन के मुकुट स्वरूप गोम्मटेश्वर बाहुबली जिनेन्द्र को मैं नमन करता हूँ।

७. मंगल-पंचगं

(मंगल-पंचक, बसंततिलका-छंद)

घादी चदुक्क खविदूण कढोर-कम्मं, णाणं च दंसण-सुहं च अणंत पत्तं।
अट्ठारसं सयल-दोस-विमुत्त पुज्जं, देवाधिदेव-अरहंत-महं णमामि॥१॥

अर्थ- जिन्होंने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय व अंतराय इन चार घातिया कर्मों को नष्ट करके अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसुख व अनंतवीर्य इन चार चतुष्टयों को प्राप्त किया है, जो समस्त अठारह दोषों से रहित तथा जगतपूज्य हैं, उन देवाधिदेव अरहंत भगवान को मैं नमन करता हूँ।

सम्मत्त-णाण-सुहुमं च बलं च दंसं, अब्बाइबाह-अवगाहण-आदि जुत्तं।
णट्ठट्ठकम्म-णिय-सुद्धसरूव-पत्तं, णिच्चं णमामि किदकिच्च अणूव-सिद्धं॥२॥

अर्थ- सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाधत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणों से युक्त, ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों को पूरी तरह से नष्टकर निजस्वरूप को प्राप्त, कृतकृत्य, अनुपम सिद्धों को मैं नित्य नमन करता हूँ।

णाणं सुदंसण चरित्त तवं च वीरं, आचार-जुत्त-दहलक्खण-धम्म-पुण्णं।
सिस्साण संगह-सुणिग्गह सेट्ठ-बुद्धिं, कप्पादि-णिट्ठ-विमलं पणमामि सूरिं॥३॥

अर्थ- ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार इन पांच आचारों से युक्त, उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्म से पूर्ण, शिष्यों के अच्छी तरह संग्रह-निग्रह में श्रेष्ठ बुद्धि वाले आचेलक्य आदि कल्पों के आचरण में निष्ट, दोष रहित आचार्यों को मैं प्रणाम करता हूँ।

सज्झाय-वायण-सुपुच्छण-आमणाए, धम्मोवदेस-अणुपेहण-भावणाए।
जुंजेदि वा स-पर बारस-अंग सत्थे, तं पाढगं समणसीहमहं णमामि॥४॥

अर्थ- स्वाध्याय के वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय व धर्मोपदेश रूप पांच भेदों में अथवा द्वादशांग रूप जिनवाणी के शास्त्रों की भावना में जो स्वयं को तथा अन्य साधुओं, जिज्ञासुओं को जोड़ते हैं, उन श्रमणसिंह उपाध्याय

परमेष्ठी को मैं नमन करता हूँ।

आसा-कसाय-विसयादु य विप्पमुत्तो, णाणं च झाण अणुपेहण णिच्चजुत्तो।
आरंभ-संग-विरदं तव-भाव-पूदं, लीणं-सहाव पणमामि सु-साहुवग्गं॥५॥

अर्थ- आशा, (इच्छा), क्रोधादि कषाय और इन्द्रिय विषयों की वासना से रहित, ज्ञान-ध्यान व अनुप्रेक्षाओं में नित्य ही जुड़े रहने वाले, आरंभ-परिग्रह से रहित, तप की भावना से पवित्र और निज आत्मीक स्वभाव में लीन, श्रेष्ठ साधु-संघों को मैं प्रणाम करता हूँ।

लोगस्स-पुज्ज-अरहंत विसुद्ध-सिद्धं, आयारपूद-सयलाइरियं च सेट्ठं।
अज्झावए पद पदिट्ठिद-पाढगं वा, वंदामि मंगल-सरूव य सव्वसाहुं॥६॥

अर्थ- इंद्रादि लोकमान्य विभूतियों द्वारा पूजा को प्राप्त अरहंतों, संपूर्ण कर्मों को नष्टकर विशुद्धता को प्राप्त सिद्धों, पंचाचारों से पवित्र श्रेष्ठ आचार्यों, अध्यापक के पद पर प्रतिष्ठित उपाध्यायों तथा लोक में मंगल स्वरूप समस्त साधुओं को मैं वंदन करता हूँ।

अभ्यास

प्रश्न १. प्रवचनसार के मंगलाचरण में किसे नमस्कार किया है?

प्रश्न २. द्रव्य कौन से हैं? उनका क्या स्वरूप है।

प्रश्न ३. उपयोग कितने प्रकार का है?

प्रश्न ४. श्रुतदेवी सरस्वती कहाँ से उत्पन्न हुई और किन-किन के द्वारा उसे धारण किया गया?

प्रश्न ५. पाँच परमेष्ठियों के नाम लिखकर किन्हीं दो परमेष्ठियों की विशेषताएँ लिखिए?

प्रश्न ६. किसी स्तुति के दो छंद सार्थ लिखिए?

प्रश्न ७. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

१ पणमामि वड्ढमाणं तित्थं.................. कत्तारं।

२. वाहुबली............. के पुत्र तथा भरत के ....थे।

३. विसय विस रेयणं जम्म........छेयणं जिणवयण मोसहं।

४. परमेठ्ठी थुदी में........... को नमस्कार किया गया है।

५. जीवमजीवं दव्वं जिणवर......... जेण णिद्दिट्ठं।

---- o ----

परिशिष्ट

संज्ञा एवं क्रिया शब्द

प्रस्तुत पाठ में संज्ञा एवं क्रिया (धातु) शब्द दिए जा रहे हैं। प्राकृत में प्राय: आत्मनेपदी क्रियाएँ भी परस्मैपद की तरह चलती हैं। गुरुजनों के मार्गदर्शन में अथवा स्व-विवेक से इनका वाक्यों में प्रयोग करें।

१. पुल्लिंग संज्ञा शब्द

क्रम.	शब्द	अर्थ
१.	अरि	शत्रु
२.	अवयस	अपयश
३.	आगम	शास्त्र
४.	कइ	कवि
५.	कयंत	मृत्यु
६.	कर	हाथ
७.	करह	ऊँट
८.	करि	हाथी
९.	करेणु	हाथी
१०.	कुक्कुर	कुत्ता
११.	कूव	कुआ
१२.	केसलि	सिंह
१३.	गंथ	पुस्तक
१४.	गव्व	गर्व
१५.	गाम	गांव
१६.	गामणी	गांव का मुखिया
१७.	गिरि	पर्वत
१८.	गुरु	गुरु
१९.	घर	मकान
२०.	जइ	यति
२१.	जंतु	प्राणी
२२.	जोगि	योगी
२३.	णर	मनुष्य
२४.	तरु	पेड़
२५.	तवस्सि	साधु/मुनि/तपस्वी
२६.	तेउ,तेय	तेज/अग्नि
२७.	दिअर	देवर
२८.	दिवायर	सूर्य
२९.	दुह,दुक्ख	दु:ख
३०.	धणु	धनुष
३१.	णरवइ	राजा
३२.	णरिंद	राजा
३३.	पइ,पदि	पति
३४.	पड,वत्थ	वस्त्र
३५.	परमेसर	परमेश्वर
३६.	पहु	प्रभु
३७.	पाणी	प्राणी
३८.	पिआमह	दादा
३९.	पुत्त	पुत्र
४०.	पोत्त	पोता
४१.	फरसु	कुल्हाड़ी
४२.	बंधु	भाई
४३.	बप्प	पिता
४४.	बालअ	बालक
४५.	बिंदु	बूँद
४६.	भव	संसार
४७.	मंति	मन्त्री
४८.	मच्चु	मृत्यु

४९.	माउल	मामा
५०.	मारुअ	पवन
५१.	मित्त	मित्र
५२.	मुणि	मुनि
५३.	मेरु	पर्वत विशेष
५४.	मेह	मेघ
५५.	रक्खस	राक्षस
५६.	रयण	रत्न
५७.	रवि,सुज्ज	सूर्य
५८.	रहु	रघु
५९.	रहुणन्दण	राम
६०.	राय	नरेश, राजा
६१.	रिउ	दुश्मन
६२.	रिसि	मुनि
६३.	वय	व्रत
६४.	वाउ	वायु
६५.	वायस	कौआ
६६.	विहि	विधि
६७.	सत्तु	शत्रु
६८.	सप्प	साँप
६९.	सयंभू	स्वयंभू
७०.	सलिल, णीर	पानी
७१.	ससि, णिसि	चन्द्रमा
७२.	ससुर	ससुर
७३.	सामि	मालिक
७४.	सायर, सागर	समुद्र
७५.	साहू	साधु
७६.	सिसु,पुत्र	बालक/पुत्र
७७.	सीह,सिंघ	सिंह
७८.	सूणु	पुत्र
७९.	सेउ	पुल
८०.	सेणावइ	सेनापति
८१.	हणुवंत, हणुमंत	हनुमान
८२.	हत्थि,गज	हाथी
८३.	हरि	हरि
८४.	हुअवह,अग्गी	अग्नि

२. नपुंसकलिंग संज्ञा शब्द-

क्रम.	शब्द	अर्थ
१.	अंसु	आँसू
२.	अच्छि	आँख
३.	अट्ठि	हड्डी
४.	असण	भोजन
५.	आउ	आयु
६.	उदग	जल
७.	कट्ठ	काठ
८.	कमल	कमल
९.	कम्म	कर्म
१०.	खीर	दूध
११.	खेत्त	खेत
१२.	गाण, गीद	गीत
१३.	घय, घद	घी
१४.	छिक्क	छींक
१५.	जाणु	घुटना
१६.	जीवण, जीविद	जीवन
१७.	जूअ	जुआ
१८.	जोव्वण	यौवन
१९.	णयरजण	नागरिक
२०.	णह, आगास	आकाश
२१.	णाण	ज्ञान
२२.	तिण	घास
२३.	दहि	दही
५४.	दंसण	दर्शन
२५.	दारु	लकड़ी
२६.	धण	धन

२७.	धण्ण	धान
२८.	पत्त	कागज
२९.	पुप्फ	फूल
३०.	पोट्टल	गठरी
३१.	बीअ	बीज
३२.	भय	भय
३३.	भोयण	भोजन
३४.	मज्ज	मद्य
३५.	मण	चित्त,मन
३६.	मरण	मरण
३७.	महु	मधु
३८.	रज्ज	राज्य
३९.	रत्त	रक्त
४०.	रिण	कर्ज
४१.	रूव	रूप
४२.	लक्कुड	लकड़ी
४३.	वण	जंगल
४४.	वत्थ	वस्त्र
४५.	वत्थु	पदार्थ
४६.	वसण	व्यसन
४७.	वारि	जल
४८.	विमाण	विमान
४९.	वेरग्ग	वैराग्य
५०.	सच्च	सत्य
५१.	सप्पि,घिद	घी
५२.	सालि	चावल
५३.	सासण	शासन
५४.	सिर	मस्तक
५५.	सील	सदाचार
५६.	सुत्त	धागा
५७.	सुह, सोक्ख	सुख

(३) स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द-

क्रम	**शब्द**	**अर्थ**
१.	चंदणा, चेलणा	चंदना, चेलना
२.	आणा	आज्ञा
३.	इच्छा	अभिलाषा
४.	इत्थी	स्त्री
५.	उप्पत्ति	जन्म
६.	ओहि/अवहि	समय की सीमा
७.	कडच्छु	कर्छी,चमची
८.	कण्डू	खाज
९.	कण्णा	कन्या
१०.	कमला	लक्ष्मी
११.	करुणा	दया
१२.	कलसिया	छोटा घड़ा
१३.	कहा	कथा
१४.	खज्ज	खुजली
१५.	गइ	गति
१६.	गंगा	गंगा
१७.	गड्ढा	खड्डा
१८.	गुहा	गुफा
१९.	चंचू	चोंच
२०.	चमू	सैन्य
२१.	जउणा	यमुना
२२.	जंबू	जामुन का पेड़
२३.	जरा	बुढ़ापा
२४.	जाइ	जन्म/जाति
२५.	जाया	स्त्री
२६.	जुवइ	युवती
२७.	झुंपडा	झोंपड़ी
२८.	णई	नदी
२९.	णागरी	नगर वासिनी
३०.	णिद्दा	नींद

३१.	णारी	नारी
३२.	तणया	पुत्री
३३.	तण्हा	तृष्णा,आसक्ति
३४.	तणु	शरीर
३५.	तित्ति	तृप्ति/सन्तोष
३६.	तिस्सा,तिसा	प्यास
३७.	थुइ	स्तुति
३८.	धत्ती	दाई
३९.	धिई	धैर्य
४०.	धूआ	बेटी
४१.	धेणु	गाय
४२.	णणंदा	ननद
४३.	णिसा	रात्रि
४४.	पइट्ठा	प्रतिष्ठा
४५.	पण्णा	प्रज्ञा
४६.	परमेसरी	सम्पन्न स्त्री
४७.	परिक्खा	परीक्षा
४८.	पसंसा	प्रशंसा
४९.	पिआमही	दादी
५०.	पुढवी	पृथ्वी
५१.	पुत्ती	पुत्री
५२.	बहिणी	बहिन
५३.	बहू	बहू
५४.	भत्ति	भक्ति
५५.	भुक्खा	भूख
५६.	मइ,मदि	मति
५७.	मइरा	मदिरा
५८.	मणि	रत्न
५९.	महिला	स्त्री
६०.	माया	माता
६१.	मेहा,मेधा	बुद्धि
६२.	रज्जु	रस्सी
६३.	रत्ति	रात
६४.	रिद्धि	वैभव
६५.	लच्छि	लक्ष्मी
६६.	लद्धि	प्राप्ति
६७.	वाया	वाणी
६८.	संझा	सायंकाल
६९.	सत्ति	बल
७०.	मुत्ति	मुक्ति
७१.	सद्धा	श्रद्धा
७२.	समणी	श्रमणी
७३.	सरिआ	नदी
७४.	ससा	बहिन
७५.	सस्सू	सास
७६.	साडी	साड़ी/वस्त्र/
७७.	दिक्खा	दीक्षा
७८.	सामिणी	मालकिन
७९.	सिक्खा	शिक्षा
८०.	सीया	सीता
८१.	सत्ति	बल
८२.	सोहा	शोभा
८३.	हणु	ठोढ़ी

क्रिया शब्द-

प्रस्तुत क्रिया शब्दों के सभी लकारों में रूप बनाएं

१. सकर्मक क्रियाएँ

क्रम.	**क्रिया**	**अर्थ**
१.	अच्च	पूजा करना
२.	अस	खाना
३.	आगच्छ	आना
४.	इच्छ	इच्छा करना
५.	उग्घाड	खोलना, प्रकट करना

६.	उप्पाड	पाड़ना,उन्मूलन करना
७.	उवयार	उपकार करना
८.	आणंद	अभिनन्दन करना
९.	कट्ट	काटना
१०.	कर	करना
११.	कलंक	कलंकित करना
१२.	कह	कहना
१३.	कीण	खरीदना
१४.	कुट्ट	कूटना
१५.	कोक्क	बुलाना
१६.	खंड	टुकड़ा करना
१७.	खण	खोदना
१८.	खम	क्षमा करना
१९.	खा	खाना
२०.	खिंस	निन्दा करना
२१.	खिव	फेंकना
२२.	गच्छ	जाना
२३.	गण	गिनना
२४.	गरह	निन्दा करना
२५.	गवेस	खोज करना
२६.	गह	ग्रहण करना
२७.	गा	गाना
२८.	गाअ	गाना
२९.	गुंथ	गूंथना/गठना
३०.	चक्ख	चखना
३१.	चर	चरना
३२.	चव	बोलना
३३.	चिंत	चिंता करना
३४.	चिण	इकट्ठा करना
३५.	चुअ	त्याग करना
३६.	चूर	चूर्ण करना
३७.	चोप्पड	स्निग्ध करना
३८.	चोराव	चुराना
३९.	छड्ड	छोड़ना
४०.	छल	ठगना
४१.	छुव	स्पर्श करना
४२.	छोड	छोड़ना
४३.	छोल्ल	छीलना
४४.	जण	उत्पन्न करना
४५.	जाण	जानना
४६.	जिंघ,जिग्घ	सूँघना
४७.	जिम, जीम	जीमना
४८.	जुंज	जोड़ना
४९.	जेम	जीमना
५०.	जोअ	प्रकाशित करना
५१.	झा	ध्यान करना
५२.	डंस,दंस	डसना
५३.	ढक्क	ढकना
५४.	णम	नमस्कार
५५.	णिरक्ख	देखना
५६.	णिसुण	सुनना
५७.	थुण	स्तुति करना
५८.	दह	जलाना
५९.	दा	देना
६०.	देक्ख,पास	देखना
६१.	धार	धारण करना
६२.	धाव	दौड़ना
६३.	धिक्कार	धिक्कारना
६४.	धोअ	धोना
६५.	पढ	पढ़ना
६६.	पणम	प्रणाम
६७.	पाल	पालना
६८.	पाव	पाना
६९.	पिअ,पिब	पीना
७०.	पीड	पीड़ा देना

७१.	पीस	पीसना
७२.	पुक्कर	पुकारना
७३.	पेच्छ	देखना
७४.	पेस	भेजना
७५.	फाड	फाड़ना
७६.	बंध	बांधना
७७.	बुज्झ	समझना
७८.	बोल्ल	बोलना
७९.	भण	कहना
८०.	मइल	मैला करना
८१.	मग्ग	माँगना
८२.	माण	सम्मान करना
८३.	मार	मारना
८४.	मुण	जानना
८५.	जा	जाना
८६.	रंग	रंगना
८७.	रक्ख	रक्षा करना
८८.	रक्ख	पालन करना
८९.	रय,रच	बनाना
९०.	रोक्क	रोकना
९१.	लभ	प्राप्त करना
९२.	लिह,लिख	लिखना
९३.	लिह	चाटना
९४.	ले,गह	लेना
९५.	वंद,णम	प्रणाम करना
९६.	वक्खाण	व्याख्यान करना
९७.	वच्च,गच्छ	जाना
९८.	वण्ण	वर्णन करना
९९.	वद्धाव	बधाई देना
१००.	वह	धारण करना
१०१.	विण्ण	जानना
१०२.	सिंच	सींचना
१०३.	सिक्ख	सीखना
१०४.	सुण	सुनना
१०५.	सुमर	स्मरण करना
१०६.	सेव	सेवा करना
१०७.	हण	मारना
१०८.	हिंस	हिंसा करना

(२) अकर्मक क्रियाएं-

क्रम.	**क्रिया**	**अर्थ**
१.	अच्छ	बैठना
२.	उग	उगना
३.	उच्छल	उछलना
४.	उच्छह	उत्साहित होना
५.	उज्जम	प्रयास करना
६.	उट्ठ	उठना
७.	उड्ड	उड़ना
८.	उपज्ज	पैदा होना
९.	उल्लस	खुश होना
१०.	उवरम	विरत होना
११.	उवविस	बैठना
१२.	उवसम	शान्त होना
१३.	उस्सस	सांस लेना
१४.	कंद	रोना
१५.	कंप	कांपना
१६.	कलह	कलह/झगड़ा करना
१७.	किलिस	दुःखी होना
१८.	कील	कीलना
१९.	कुद्द	कूदना
२०.	कुल्ल	कूलना
२१.	खंज	लंगड़ाना
२२.	खय	नष्ट होना
२३.	खास	खाँसना
२४.	खिज्ज	अफसोस करना
२५.	खिस	खिसकना

२६.	खेड्ड,खेड	क्रीड़ा करना
२७.	खेल	खेलना
२८.	गज्ज	गरजना
२९.	गडयड	गिड़गिड़ाना
३०.	गल	गलना
३१.	गिज्झ	आसक्त होना
३२.	गुंज	गूंजना
३३.	घुम	भटकना
३४.	चिट्ठ	बैठना
३५.	चल	चलना
३६.	चिराव	देर करना
३७.	चुअ	टपकना
३८.	चुक्क	भूल करना
३९.	चेट्ठ	प्रयत्न करना
४०.	छज्ज,सोह	शोभना
४१.	छुट्ट	छूटना
४२.	छुब्भ,खुब्भ	क्षुब्ध होना
४३.	जंभा	जंभाई लेना
४४.	जग्ग	जागना
४५.	जम्म	जन्म लेना
४६.	जर	बूढ़ा होना
४७.	जल	जलना
४८.	जागर	जागना
४९.	जीव	जीना
५०.	जुज्झ	लड़ना
५१.	जोह	लड़ना
५२.	ठा,थंब	ठहरना
५३.	डर,भी	डरना
५४.	डुल,हिल	डोलना, हिलना
५५.	णच्च	नाचना
५६.	णट्ठ	नष्ट होना
५७.	णिज्झर	झरना
५८.	ण्हा	नहाना
५९.	तडफड	छटपटाना
६०.	तव	तपना
६१.	तुट्ट	टूटना
६२.	थक्क	थकना
६३.	दुक्ख	दुखना
६४.	पड	पड़ना, गिरना
६५.	पला	भाग जाना
६६.	पसर	फैलना
६७.	फुर	प्रकट होना
६८.	फुल्ल	खिलना
६९.	बुक्क	भोंकना
७०.	मर	मरना
७१.	मुच्छ	मूर्च्छित होना
७२.	रम	रमना
७३.	रुव	रोना
७४.	रूस	रूसना
७५.	लज्ज	शरमाना
७६.	लुक्क	छिपना
७७.	लुढ	लुढकना
७८.	लोट्ट	लोटना
७९.	वड्ढ	बढ़ना
८०.	वल	मुड़ना
८१.	बस	बसना
८२.	विअस	खिलना
८३.	विज्ज	उपस्थित होना
८४.	सय	सोना
८५.	सिज्झ	सिद्ध होना
८६.	सुक्ख	सूखना
८७.	सोह	शोभना
८८.	हरिस	प्रसन्न होना
८९.	हव,हो,हु	होना
९०.	हस	हँसना

---- o ----

पूर्णांक : १००
समय : ३ घंटे

प्रश्न पत्र

(परीक्षा हेतु प्रारूप)

प्रश्न-१. मंगलाचरण पूर्वक प्राकृत स्वर-व्यंजनों को लिखिए?

प्रश्न-२. स्वर परिवर्तन के कोई पांच नियम लिखिए?

प्रश्न-३. सरल एवं कठिन व्यंजन परिवर्तन के पांच-पांच प्रयोग लिखिए?

प्रश्न-४. प्राकृत में संधि के मूलतः कितने भेद हैं? दो-दो प्रयोग सहित लिखिए?

प्रश्न-५. अजित शब्द तथा पढ़ धातु (वर्तमानकाल) के रूप लिखिए?

प्रश्न-६. वर्तमान कृदन्त के उदाहरण प्रत्यय सहित लिखिए?

प्रश्न-७. समास के मुख्य भेदों को लिख कर ऐ की परिभाषा लिखिए?

प्रश्न-८. गुणवाचक विशेषण की परिभाषा के साथ दो प्रयोग लिखिए?

प्रश्न-९. आगम, पर्वत, पवन, के दो-दो पर्यायवाची शब्द प्राकृत में लिखो?

प्रश्न-१०.शौरसेनी तथा अर्द्धमागधी की तीन-तीन विशेषताएं लिखिए?

प्रश्न-११.किन्ही तीन प्राकृत वाक्यों का हिंदी में और तीन हिन्दी वाक्यों का प्राकृत में अनुवाद कीजिए?

उदाहरणार्थ- (१) खम्मामि सव्व जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।
(२) जो चलते हुए खाते हैं, वे अज्ञानी हैं।
(३) अब मैं निश्चित ही दया धर्म को धारण करूँगा।

प्रश्न-१२.हाँ/ना में उत्तर लिखिए? (परीक्षक ५ या १० वाक्य परीक्षा पत्र में लिखें)

उदाहरणार्थ- (१) असंयुक्त व्यंजन को कठिन व्यंजन कहते हैं ( )
(२) बाहुबली ऋषभदेव के पुत्र नहीं थे ( )
(३) शौरसेनी प्राकृत में प्राचीन साहित्य उपलब्ध है ( )

प्रश्न-१३.रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

उदाहरणार्थ- (१) पणमामि वड्ढमाणं..............धम्मस्स कत्तारं।
(२) धम्मो मंगलं मुक्किट्ठं अहिंसा संजमो............।
(३) वद्धमान महावीर के पिता......................थे।

प्रश्न-१४. क्षम अथवा अनुप्रेक्षा पर १०० शब्दों में निबंध लिखिए?

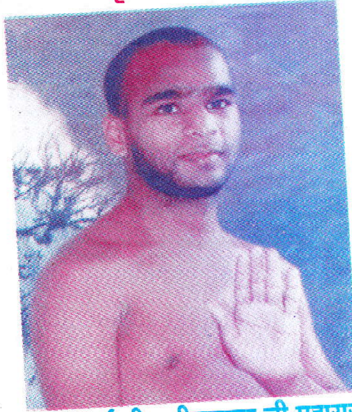
प्रश्न-१५. 'प्राकृत-बोध' से कोई दो छंद लिखिए?

---- ० ----

दिगम्बर आचार्य श्री सुनीलसागरजी द्वारा रचित प्रमुख साहित्य

क्रम	कृति का नाम	सम्पादन	प्रकाशन स्थल
१.	इष्टोपदेश (टीका)	मुनि श्री सुनीलसागरजी	टीकमगढ़
२.	विश्व का सूर्य (जीवनवृत्त)	पं. विमलकुमार सोंरया	टीकमगढ़
३.	पथिक (उपन्यास)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	वाराणसी
४.	कालजयी कविताएँ	मुनि श्री सुनीलसागरजी	वाराणसी
५.	मेरी सम्मेदशिखर यात्रा	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
६.	वसुनन्दि श्रावकाचार (पूर्वार्द्ध)	प्रो.भागचन्द्र जैन 'भास्कर'	वाराणसी
७.	वसुनन्दि श्रावकाचार (उत्तरार्द्ध)	पं. विमलकुमार जैन सोंरया	टीकमगढ़
८.	दूसरा महावीर (जीवनवृत्त)	महेन्द्रकुमार बड़जात्या	जयपुर
९.	अहिंसावतार (काव्य संग्रह)	रमेशचन्द 'मनया'	भोपाल
१०.	जैनाचार विज्ञान (आलेख)	डॉ.अनुपम जैन डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
११.	काशी दर्शन (यात्रावृत्तांत)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	वाराणसी
१२.	मानवता के आठ सूत्र (निबंध)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
१३.	बिना पूंछ का बन्दर (कविताएं)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	वाराणसी
१४.	संक्षिप्त जैन इतिहास	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
१५.	यात्रा के संस्मरण	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
१६.	ब्रह्मचर्य विज्ञान (आलेख)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
१७.	धरती के देवता (वार्ता)	प्रो. सुदर्शन लाल जैन	वाराणसी
१८.	भावणासारो (प्राकृत)	प्रो. उदयचन्द जैन	ज्ञानपीठ,दिल्ली
१९.	णीदी संगहो (प्राकृत)	प्रो. उदयचन्द जैन	उदयपुर
२०.	थुदि संगहो (प्राकृत)	प्रो. उदयचन्द जैन	मुंबई
२१.	तत्त्वार्थसूत्र (व्याख्या)	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
२२.	अध्यात्मसार शतक	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
२३.	सौ कविताएं	डॉ.जयकुमार जैन 'जलज'	इन्दौर
२४.	आत्मोदय शतक	डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर
२५.	प्राकृत बोध	प्रो.प्रेम सुमन जैन डॉ.महेन्द्रकुमार जैन 'मनुज'	इन्दौर

कृतिकार



दिगम्बराचार्य श्री सुनीलसागर जी महाराज

मध्यप्रदेश के सागर जिलान्तर्गत तिगोड़ा (हीरापुर) नामक ग्राम में श्री भागचन्द्र जैन एवं श्रीमती मुन्नीदेवी जैन के यहाँ आश्विन कृष्णा दशमी, वि.सं. २०३४ तदनुसार ७ अक्टूबर १९७७ को जन्में बालक संदीप का प्रारम्भिक शिक्षण किशुनगंज (दमोह) में तथा उच्च शिक्षण सागर में सम्पन्न हुआ।

सत्संगति एवं आध्यात्म ज्ञान वशात् शास्त्री एवं बी.कॉम. परीक्षाओं के मध्य आप विशिष्ट रूप से वैराग्योन्मुख हुए। २० अप्रैल १९९७ महावीर जयन्ती के पावन दिन बरुआसागर (झांसी) में आचार्य श्री सन्मतिसागरजी द्वारा आपको जैनेश्वरी दिगम्बर दीक्षा प्राप्त हुई और मुनि सुनीलसागर नाम से प्रख्यात हुए तथा गुरुदेव के द्वारा उनके ही जन्म दिवस माघ शुक्ला सप्तमी दिनांक २५ जनवरी २००७ को औरंगाबाद में आचार्य पदारोहण हुआ। आप मृदुभाषी, बहुभाषाविद्, उद्भट विद्वान्, उत्कृष्ट साधक, मार्मिक प्रवचनकार और एक अच्छे साहित्यकार हैं।

जैन संस्कृति शोध संस्थान

२२/२, रामगंज, जिन्सी, इन्दौर-४५२ ००६